श्रीरामानन्ददर्शनशोधसंस्थानग्रन्थमाला के ७४-७५वें पुष्प

सर्वेश्वरश्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्रीहनुमते नमः

प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकाराय नमोनमः







जगद्गुरुश्रीहर्यानन्दाचार्यप्रणीतभाष्य-प्रकाश-सहितः

श्रीरामस्तवराजः

तथा

श्रीरामरक्षास्तोत्रम्

प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यों पर तात्विक टीकाकार वेदोपनिषद्भाष्यकार सार्ध
द्विशताधिक श्रीरामानन्दवेदान्तदर्शन प्रपोषक प्रबन्धों के
प्रणेता श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के ४१ वें आचार्य



आनन्दभाष्यसिंहासनासीन

जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी

के ७२वें प्राकट्योत्सव पर

हम सभी साधकवर्गों का कोटि-कोटि सादर अभिवादन

अक्षयतृतीया-श्रीरामानन्दाब्द ७०३ ॥ २०६० विक्रमाब्द

श्रीआनन्दभाष्यमुद्रणालय-अहमदाबाद-७

卐 श्रीरामस्तवराज और गायत्री 卐

(ले. दर्शनकेशरी श्रीवैदेहीकान्तशरणजी)

वेदों में गायत्री मन्त्र का पाठ है-'तत्सवितुवरिण्यम् भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् शु. य. ३६।३' और इस गायत्री मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र हैं-'गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता गायत्री जपे विनियोगः ।'

श्रीरामस्तवराज में भी गायत्री मन्त्र का निरूपण उपबृंहणरूप से किया गया है-'भर्गं वरेण्यं विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम्-श्लो. २८' तथा इसके ऋषि का निरूपण किया गया है-'विश्वामित्र वशिष्ठादि मुनिभिः परिसेवितत्-श्लो. १९' 'विश्वामित्र प्रियं दान्तम्-४२ ।' एवं गायत्री के मन्त्रार्थ का प्रतिपादन है-'आदित्यरविमीशानं घृणिं सूर्यमनाय मयम्-श्लो. ३०' 'सूर्यमण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम् श्लो. ४९' 'रविमण्डलस्थम्-श्लो. ६२' 'आदित्यमण्डलान्तर्गतम्-श्लो. ४०' 'आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्-श्लो. ६४' 'आदित्यचन्द्रानलसुप्रभावम्-श्लो.' 'ज्यौतिर्मयं राममहं भजामि-श्लो. ६५' 'स्वतेजसा पूरितविश्वमेकम्-श्लो. ६२' 'त्वमक्षरं परंज्योतिः-श्लो. ७५' 'ज्योतिषां पतये नमः-श्लो. ५०' 'ज्योतिरमलं शिवम्-श्लो. ४,२२' 'सहस्त्रादित्यतेजसम्-श्लो. ११' 'भानु कोटिप्रतीकाशं श्लो. १३' 'समस्तसाक्षी तमसः परस्तात् श्लो. ६६' । इस प्रकार श्रीरामस्तवराज में गायत्री मन्त्र का ऋति और मन्त्रार्थ के साथ प्रतिपादन है ।

ψ श्रीरामस्तवराज और श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर ψ

श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर श्रीरामस्तवराज का उपबृंहण है श्रीरामस्तवराज का आरम्भ या उपक्रम का विषय और शब्द है '**किं तत्वं किं परं जाप्यं किं ध्यानं मुक्ति साधनम्**-श्लो.२' और श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर का आरम्भ या उपक्रम का विषय एवं शब्द भी ठीक यही है-'**तत्वं किं किञ्च जाप्यं परमिह विवुधैर्वैष्णवैर्ध्यानमिष्टं मुक्तेः किं साधनं सत् सुमतिमतिमतो धर्म एकोऽस्तिकश्च** श्लो. १।४' इसप्रकार श्रीरा**मस्तवराज** के प्रतिपादित विषय वस्तु तत्त्व, जाप्य ध्यान, मुक्ति साधन का श्रीवैष्णव मताब्जभास्कर में प्रतिपादित किया गया है। इसप्रकार दोनों में एक विषयता और एक वाक्यता है । श्रीवैष्ण वमताब्जभास्कर का अधिकरण वा उपजीव्य श्रीरामस्तवराज है ।

श्रीरामस्तवराज में ध्यान के प्रकरण में लिखा है-'**राघवं द्विभुजं बालं राम मीषत्स्मिताननम्**-श्लो. २५' इसीको श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी ने लिखा है-'**द्विभुजस्यैव रामस्य सर्वशक्तेः प्रियोत्तम ? । ध्यानमेवं**

विधातव्यं सदारामपरायणैः ॥' (३-६)

कुछ भ्रान्त लोग कहते हैं कि श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर में यह- 'द्विभुजस्यैव रामस्य.' श्लोक किसी ने बनाकर जोड दिया है। उन नेत्र हीनों को श्रीरामस्तवराज का उक्त 'राघवं द्विभुजं' श्लोक को देखना चाहिए और विचारना चाहिए कि श्री वैष्णवमताब्जभास्कर श्रीरामस्तवराज (सनत्कुमार संहिता) का अक्षरानुसारी है। उस प्रतिपाद्य विषय-तत्त्व, जाप्य ध्यान मुक्ति साधन का पदानुसरण और अक्षरानुसरण करनेवाला है जिसमें यह श्लोक भी यथावत् है। तब यह श्लोक सनत्कुमार संहिता (श्रीरामस्तवराज) प्रतिपादित न होकर किसी अन्य द्वारा निर्मित कैसे हो सकता है ?

卐 श्रीरामस्तवराज और विशिष्टाद्वैत वेदान्त 卐

सभी वेदान्त दर्शन तत्त्वत्रय (ब्रह्म-जीव-प्रकृति) को मानते हैं। परन्तु शङ्कराचार्यजी का मायावादी अद्वैत वेदान्त इन तीनों में केवल ब्रह्म को सत्य मानता है और शेष दो जीव एवं प्रकृति को मिथ्या। वह विवर्तवाद का प्रतिपादक है। इसमें १ प्रतिविम्बवाद, २ स्वप्नवाद, ३ भ्रमवाद एवं ४ अवच्छेदकवाद का निरूपण है। किन्तु इसके विपरीत अन्य सभी वेदान्त-द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, अचिन्त्यभेदाभेदवाद और विशिष्टाद्वैतवाद तीनों तत्वों को सत्य मानते हैं। इन सभों में मतभेद केवल इन तीनों तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर है। द्वैतवादी ब्रह्मजीव भेद, ब्रह्म प्रकृति भेद, जीव प्रकृति भेद जीव भेद और प्रकृति प्रकृति भेद- ये पांच नित्य भेद मानते हैं और ब्रह्म को जगत् का निमित्त कारण मानते हैं उपादान कारण नहीं। शेष वेदान्त मतों में शुद्धाद्वैतवाद जीव और प्रकृति को ब्रह्म के साथ तादात्म्य वा अभेद मानता है तथा अविकृत परिणामवाद को मानता है। द्वैताद्वैतवादादि का विशिष्टाद्वैत के साथ बहुत कम अन्तर है। ये सद्वारक परिणामवादी हैं और ब्रह्म को जगत् का निमित्त एवं उपादान दोनों ही कारण मानते हैं।

विशिष्टाद्वैत वेदान्त में ब्रह्म का जीव एवं जगत् के साथ जो सम्बन्ध हैं उनका विस्तृत निरूपण श्रीरामस्तवराज में इसप्रकार है-१-कारण कार्य (जगद्योनिम्-श्लो. ३४, सर्वकारण-श्लो. ४६) २-कर्तृत्व-श्लो. विश्व सृजम्-श्लो. ६५) ३-बीज वृक्ष (नगानद्यस्तथाद्रुमाः-श्लो. ७२) ४-सूक्ष्मम्-श्लो. ७६) ५-अव्यक्त

व्यक्त श्लो. ६५) ६ रूपी रूप (रामस्य रूपोऽयं सत्यमिदं जगत्-श्लो. ९२) ७-व्यापक व्याप्य (त्वन्मयं सर्वमेव हि श्लो. ७४ सर्वगतं सूसूक्ष्मं पर ब्रह्म सनातनम् श्लो. ७६) ८-पूर्ण पूरक (परिपूर्णमेकम् श्लो. ६७), त्वत्त्वोऽन्यन्नैव किञ्चन श्लो.७५ स्वतेजसा पूरित विश्वमेकम् श्लो. ६२) ९-साक्षी साक्ष्य (समस्त साक्षी श्लो. ६६) १०-शरण्य शरण (शर णागतोऽस्मि श्लो. ९३) १०-आधाराधेय (सर्वाधारम् श्लो. ४६) ११-आत्मा आत्मीय (सर्वभूतस्थम्-श्लो. ४६ सर्वात्मकं सर्वगतं स्वरूपम्-५४) ११-रक्षक रक्ष्य (सर्वक्लेशाप हरणम् शरणागतवत्सलम् श्लो. ४३, प्रपन्नजनसेविने श्लो. ५१) १३-वैद्यरुक् (भवरोग वैद्यम् श्लो. ५७) १४-गुरुशिष्य (रघुनाथं जगद्गुरुम् श्लो. २८) १५-स्वामी स्व (ज गत्पतिम् श्लो. २७, राजाधिराजम् श्लो. ६२ जगत्पतिम् श्लो. ७६ १६-ईश्वर जीव (विश्वेश्वरम् श्लो. ६२) १७-पिता पुत्र (माता पिता श्लो. ७४) इत्यादि। इनमें पिता पुत्र प्रभृति नवविध सम्बन्धों का निरूपण श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर में हुआ है।

इनके अतिरिक्त श्रीरामस्तवराज में ब्रह्म के निम्न लिखित रूपों १-अणोरणीयान् (श्लो. २६) २-महतो महान्तम् (श्लो. ६७) विभु श्लो. २०, ७५) ३-अनन्त (श्लो. २४ अपार (श्लो. ६१, ५-सर्वशेषी (त्वत्वोऽन्यन्नैव किञ्चन श्लो. ७५) ६-सर्वव्यापकत्वन्मयं सर्वमेवहि श्लो. ७४) सर्वगतं श्लो. ७६, ७-(सूक्ष्मम् श्लो. ४५-४७) ८-आदि श्लो. ६०, ६१, ६४, ९-अनादि श्लो. ३४) १०-एक (६१,६२) ११-शुद्ध (श्लो. ४५) १२-पर (श्लो. ४, ३४, ४५, ४६) १३-परम (श्लो. ४) १४-ज्योति (श्लो. ४, २२, ५०, ५५, ३९-७५) १५-तेज (श्लो. ६२) १६-सत् (श्लो. २९,४८,५७) १७-चित् (श्लो. २४,३२,३९-१८) १८-आनन्द (श्लो. ३०,३२,३४,३९,४८,५७,६१,६३) १९-नित्य (श्लो. २४,३५) २०-सनातन २६,५७,५९,४६,७६, २१-ध्रुव (श्लो. ५५) २२-अक्षर (श्लो. ७५, २३-अच्युत (श्लो. ३३) २४-अव्यय श्लो. ३३, २५-ब्रह्म श्लो. ४।४५।७५ २६-परब्रह्म श्लो. ७४, २७-अज श्लो. ६१, २८-अमल श्लो. ४,८६, २९-अद्वैत श्लो. ८६, ३०-कवि श्लो. २६-२७,६३, ३१-बागीश श्लो. २७,३१, ३२-पुरुष श्लो. २५,२६-६२, ३३-मङ्गल श्लो. २०, ३४-शिव श्लो. ४,५७, ३५-विज्ञान श्लो. २५, ३६-संवित् श्लो. ६१,८६, ३७-वीर श्लो. २०,३८,४४, ३८-ईप्सितप्रद श्लो. ४०, ३९-सर्वदुःखहर श्लो. ३८,४३, ४०-कल्पद्रुम श्लो. ५८, ४१-कल्मषनाशक (श्लो. ६७) ४२-कैवल्यपदकारण श्लो. ४; ४३-भवरोग वैद्य (श्लो. ५६) ४४-शरणागतवत्सल श्लो. ४३,५१, ४५-ईश (श्लो. २६,२८,३०,३२-३८) ४६-शान्त श्लो. २९,४५,५७,७६) ४७-तत्त्व श्लो. ६२, ४८-तपोमूर्ति श्लो. ३२, ४९-सच्चिदानन्दविग्रह (श्लो. ९२) ५०-

चिन्मयानन्दविग्रह श्लो. ३२, ५१-अनन्तमूर्ति श्लो. ६१, ५२-अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमूर्ति श्लो. ६५ इत्यादि) का भी प्रतिपादन है। जिससे विशिष्टाद्वैत वेदान्त प्रतिपादित होता है। जिसका सामञ्जस्य जगद्गुरु श्रीहर्यानन्दाचार्य कृति भावार्थप्रकाशभाष्य एवं आनन्द भाष्यसिंहासनासीन जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी कृत प्रकाश से करलें।

卐 श्रीरामस्तवराज का उपसंहार 卐

श्रीरामस्तवराज का उपसंहार वाक्य इसप्रकार लिखा है-

'इति श्रीरघुनाथस्य स्तवराजमनुत्तमम्।
सर्वसौभाग्यसम्पत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम्॥ श्लो. ८७॥'

इस श्लोक में 'इति' पद ग्रन्थ के अथ से इति तक उपसंहार वाचक है 'श्रीराम' पद ग्रन्थ के प्रतिपाद्य उद्देश्य का स्वरूप निरूपक है, "स्तवराजम्' पद उक्त उद्देश्य का विधेय विषय का प्रतिपादक है 'अनुत्तमम्' उद्देश्य एवं विधेय दोनों की सर्वोत्कृष्टता का प्रतिपादक है। 'सर्व सौभाग्य सम्पत्ति' शब्द 'अभ्युदय' का बोधक तथा 'मुक्तिदं शुभम्' शब्द 'निःश्रेयस' का बोधक है। इसप्रकार श्लोक का द्वितीय चरण (यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः-वै.सू. १।१।२' का निरूपक है। जगद्गुरुश्रीतुलसीदासजी की भाषा में-'लोक लाहु परलोक निबाहु' का प्रतिपादक है। उपनिषद् की भाषा में प्रेय और श्रेय का बोधक है। वैशेषिक प्रभृति दर्शनों का निःश्रेयस (मुक्ति) केवल दुःखों से आत्यन्तिक छुटकारा मात्र है (आत्यन्तिकीदुःखनिवृत्तिः मुक्तिः वै. सू. १।१।४)' आत्यन्तिक दुःखाभावः-न्या. वा.' वह सुखात्मिका नहीं है। परन्तु श्रीरामस्तवराज प्रोक्त यह प्राप्य निःश्रेयस न केवल मुक्ति मात्र है अपितु शुभ (आनन्द) रूप भी है।' अतः मुक्ति के साथ शुभम् पद का भी प्रयोग किया गया है। अभ्युदय एवं यह निःश्रेयस पृथक् पृथक् विषय है। इसके ज्ञापन के लिये दोनों के साथ पृथक् पृथक् 'दायकं' एवं 'मुक्तिदं' पद का प्रयोग हुआ है 'सर्व सौभाग्य सम्पत्ति दायकं एवं मुक्तिदं शुभम् अभ्युदय के विषय में भी केवल सम्पत्ति का विषय नहीं है प्रत्युत सौभाग्य सम्पत्ति का जिससे गीतोक्त दैवी सम्पत्ति का ही सङ्केत है आसुरी सम्पत्ति का नहीं।

❀ श्रीरामस्तवराज की प्रमाणिकता ❀

श्रीरामस्तवराज की प्रमाणिकता का प्रतिपादन करते हुये ग्रन्थ के अन्त में लिखा गया है-'कथितं ब्रह्म पुत्रेण वेदानां सारमुक्तमम्। गुह्याद्गुह्यतरं दिव्यं तव

स्नेहात्प्रकीर्तितम् ॥ श्लो. ८८।' इस श्लोक में श्रीरामस्वराज को १-कथितं ब्रह्म पुत्रेण, २-वेदानां सारमुक्तम्. ३-गुह्याद् गुह्यतरं, ४-दिव्यं इन चार हेतुओं से इसकी प्रामाणिकता और यथार्थता का प्रतिपादन किया गया है । प्रथम हेतु 'कथितं ब्रह्म पुत्रेण' के विषय में ज्ञातव्य है कि न्याय दर्शन के अनुसार शब्द की प्रामाणिकता उसके वक्ता के अधीन है । न्यायसूत्रकार गौतम कहते हैं-'आप्तोपदेशः शब्दः न्या. सू. ।' इसके भाष्य में वात्स्यायन कहते हैं । आप्तः खलु साक्षात्कृतधर्मो यथाऽदृष्टस्यार्थस्य चिख्यापयिषया प्रयुक्तः उपदेष्टा साक्षात्कारणमर्थस्याप्तिः तथा प्रवर्तते इत्याप्तः ।' अन्नम् भट्ट कहते है-'आप्तस्तु यथार्थवक्ता-त.सं. ।' वह आप्त वाक्य दो प्रकार का कहा गया है-'स द्विविधो दृष्टादृष्टार्थत्वात्-न्या.सू. इह लौकिक विषयक वाक्य दृष्टार्थ एवं पारलौकिक विषयक वाक्य अदृष्टार्थ है । यहां प्रश्न होता है कि इहलौकिक दृष्टार्थ वाक्य को तो प्रमाणिक माना जा सकता है । क्योंकि इसकी परीक्षा की जा सकती और प्रत्यक्ष अनुभव की जा सकती है । परन्तु पारलौकिक अदृष्टार्थ वाक्य की प्रामाणिकता कैसे स्वीकार को जा सकती है । इसके उत्तर में सूत्रकार गौतम कहते हैं-'मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्चतत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात्-न्या.सू.' अर्थात् जैसे मन्त्र शास्त्र के वाक्य और आयुर्वेद शास्त्र के वाक्य यथार्थ हैं । उसी प्रकार उनके द्वारा कथित आप्तोक्त होने से ये पारलौकिक विषयक अदृष्टार्थ वाक्य भी यथार्थ हैं । अतः जिस प्रकार श्रीरामस्वराजोक्त अभ्युदयदायक वाक्य प्रत्यक्ष दृष्टार्थ प्रमाणिक हैं उसीप्रकार निःश्रेयस दायक अदृष्टार्थ भी प्रामाणिक हैं । द्वितीय हेतु 'वेदानां सारमुत्तमम्' से न्याय दर्शन के अनुसार 'वाक्यं द्विविधं लौकिकं वैदिकं चेति । वैदिकं तु ईश्वरोक्तत्वात् सर्वं प्रमाणम्' है । मीमांसा के अनुसार अपौरुषेय वाक्यं वेदः' अज्ञात ज्ञापकं वाक्यं वेदः' से वेद स्वतः अभ्रान्त प्रमाण है । ' प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते । एतं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता ॥' के कारण श्रीरामस्तवराज अभ्रान्त प्रमाण है। तृतीय हेतु 'गुह्याद्गुह्यतरं इसको मत्रिगुप्त वादे मन्त्रः' एवं 'मननात् त्रायते इति मन्त्रः' से इसकी मन्त्रता सिद्ध करता है एवं 'मन्त्र परम लघु जासु वश, विधि हरि हर सुर सर्व ।' से इसकी प्रत्यक्ष प्रामाणिकता सिद्ध करता है । चतुर्थ हेतु 'दिव्यम्' इसकी अलौकिकता, सर्व विलक्षणता एवं सर्वोत्कृष्टता का द्योतक है । भगवान् ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा हे-'जन्म कर्म च मे दिव्यम् ।' इसप्रकार श्रीरामस्तवराज वेद रूप एवं परम प्रामाणिक ग्रन्थ है ।

❀ सर्वेश्वर श्रीसीतारामाभ्यां नमः ❀

卐 श्रीहनुमते नमः 卐

श्रीरामस्तवराजः

ॐ अस्य श्रीरामस्तवराजस्तोत्रस्य सनत्कुमारऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीरामोदेवता श्रीसीताबीजं श्रीहनुमान् शक्तिः श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

卐 प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकाराय नमोनमः 卐

आनन्दभाष्यसिंहासनासीन

जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामेश्वरानन्दाचार्य

प्रणीत 卐 प्रकाश

सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।
रामप्रपन्नगुर्वन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥

इस श्रीरामस्तवराज की मन्त्रवत् प्रतिष्ठा है अतः मन्त्र के समान विनियोग एवं न्यासादि करने का विधान होने से प्रथम इसका विनियोग कर न्यास करे अनन्तर स्तवराज का पाठ करना चाहिये । विनियोग ऊपर लिखा है न्यास इस प्रकार करे-

ऋष्यादिन्यासः-**ॐ सनत्कुमार ऋषये नमः शिरसि**-इस मन्त्र को बोलकर शिर का स्पर्श करे । **ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमो मुखे** इसे बोलकर मुख का स्पर्श करे । **ॐ श्रीरामदेवतायै नमोहृदि** इसे बोलकर हृदय का स्पर्श करे । **ॐ श्रीसीताबीजाय नमोगुह्ये** इसे बोलकर गुह्य भाग का स्पर्श करे । **ॐ श्रीहनुमच्छक्तये नमः पादयो** इसे बोलकर पैरों का स्पर्श करे । **ॐ स्तवराज कीलकाय नमः सर्वाङ्गे** इसे बोलकर सभी अङ्गों का स्पर्श करे ।

करन्यासः-**ॐ रामचन्द्राय अंगुष्ठाभ्यां नमः** इसे बोलकर अंगुष्ठा का स्पर्श करे। **ॐ सीतापतये तर्जनीभ्यां नमः** इसे बोलकर तर्जनी का स्पर्श करे । **ॐ रघुनाथाय मध्यमाभ्यां नमः** इसे बोलकर मध्यम अंगुली का स्पर्श करे । **ॐ भरताग्रजाय अनामिकाभ्यां नमः** इसे बोलकर अनामिका अंगुली का स्पर्श करे **ॐ दशरथात्मजाय**

कनिष्ठिकाभ्यां नमः बोलकर कनिष्ठा अंगुली का स्पर्श करे। ॐ हनुमत्प्रभवे करतल करमपृष्ठाभ्यां नमः इसे बोलकर दोनों हाथों के करतल एवं कर पृष्ठ का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यासः-रां श्रां हृदयाय नमः इसे बोलकर हृदय का स्पर्श करे। रीं श्रीं शिरसे स्वाहा इसे बोलकर शिर का स्पर्श करे। रूं श्रूं शिखायै वौषट् इसे बोलकर शिखा का स्पर्श करे। रैं श्रैं कवचायहुम् इसे बोलकर दोनों हाथों से छाती को बांध दे। रौं श्रौं नेत्राभ्यां वौषट् इसे बोलकर नेत्रों को स्पर्श करे। रः श्रः अश्रायफट् इसे बोलकर मस्तक पर हाथ घुमाकर ताली पाडे।

अनन्तर इसी स्तवराज के '**अयोध्या नगरे रम्ये**' से लेकर '**एवं सञ्चिन्तये द्विष्णुम्**' तक के श्लोकों में वर्णन किये अनुसार श्रीरामचन्द्रजी के स्वरूप का ध्यान करके श्रीरामस्तवराज का पाठ करे।

❁ श्रीसाकेतविहारिणे नमः ❁

जगद्गुरुश्रीहर्यानन्दाचार्यप्रणीतम्

卐 भावार्थप्रकाशभाष्यम् 卐

सौमित्र्याद्युरुशाखिको बहुविधक्रीडाप्रवालोत्करः
कीर्त्युद्यत्कुसुमभवार्त्तिशमनच्छायः समन्तात्सुमः।
भक्तानन्दफलप्रदो विभुरपि प्रेम्णा समालोकितः
सीताकल्पलताञ्चितो विजयते श्रीरामकल्पद्रुमः ॥१॥
सनत्कुमारदेवर्षिव्याससूतान् वयं स्तुमः।
श्रीरामस्तवराजोयं यैरस्मासु प्रकाशितः ॥२॥
श्रीवृत्तिकारमुदिताखिलतत्त्वसार-
माधारमुर्वीतनयाश्रितयोः प्रणम्य।
तद्भावसुधारसमयैः प्रमितैर्वचोभि
र्व्याचक्ष्महे रघुपतिस्तवराजमेतत् ॥३॥
यः सिद्धान्तविरुद्धोर्थो विभात्यापततः क्वचित्।
मूलस्वारस्यतस्तत्त्ववेदिभिः स तु हीयताम् ॥४॥

अथ सोयं श्रीवादरायणसमधिगतपरमार्थयाथात्म्यः श्रीमान् सूतः श्रीरामस्वरूपरूपगुणलीलाविभूतिप्रकाशकं स्तवराजं वक्ष्यन्नादौ तस्य ऋष्यादिकं

दर्शयति ॐ अस्येति ऋषिः प्रकाशकः अनुष्टुबिति तत्प्राचुर्य्यात् भूम्नाहि व्यपदेशा भवन्ति श्रीरामो देवता, देवता प्रतिपाद्यः । अथैतस्य स्तवराजस्य श्री रामायणात्मकत्वाद् बीजं मूलकारणं श्रीसीतैवेत्याह-श्रीसीताबीजमिति । यदुक्तं-

'काव्यं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितं महद्' इति ।

श्रीहनूमांस्तु तस्य शक्तिः बलं तस्मादेव हेतोः तेनैव श्रीसीतान्वेषणसेतु निर्माणमहौषधाहरणानेकरक्षोवधादिचरितसिद्धेः ।

卐 श्रीसूत उवाच 卐

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं व्यासं सत्यवतीसुतम् ।
धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा प्रत्युवाचमुनीश्वरम् ॥१॥

यह श्रीरामस्तवराज सनत्कुमार संहितान्तर्गत है । उसमें सर्वेश्वर श्रीरामजी के परब्रह्म तत्त्व के रूपमें निरूपण करने वाला मुनीश्वर व्यास एवं धर्मराज युधिष्ठिर का जो सम्वाद हुआ है उसे व्यक्त करने के लिए श्रीसूतजी कहते हैं-मुनियों में सर्वश्रेष्ठ श्रीव्यासजी जोकि श्रीसत्ववती के पुत्र तथा आचार्य हैं वे सभी वेद पुराणादि शास्त्रों के अर्थ तत्त्व एवं रहस्यों को जानने वाले हैं उनको सादर अभिवादन कर हाथ जोडकर प्रसन्नचित्त वाले धर्मपुत्र श्रीयुधिष्ठिरजी बोले ॥१॥

अथास्य प्रादुर्भावव्यक्तये श्रीव्यासयुधिष्ठिरसंवादमवतारयति सूत इत्यादिना । धर्मपुत्रो व्यासमुवाचेत्यन्वयः । कीदृशं व्यासं सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं, सर्वेषां शास्त्रार्थानां तत्त्वं याथात्म्यं जनातीति तं यः खलु सांख्यादिशास्त्रार्थान् पूर्वपक्षान् विधाय श्रीरामस्वरूपमेव वेदान्तार्थं सिद्धान्तयामास । मुनीश्वरं सर्वमुनिदेशिकमिति तन्मतस्योपादेयत्वमुक्तम् । प्रहृष्टात्मेति प्रष्टव्यर्थे रुचि निर्भरः ॥१॥

卐 युधिष्ठिर उवाच 卐

भगवन् ? योगिनां श्रेष्ठ ? सर्वशास्त्रविशारद ?
किं तत्त्वं किं परं जाप्यं किं ध्यानं मुक्तिसाधनम् ॥२॥

श्रीयुधिष्ठिरजी ने किस प्रकार के प्रश्न पूछे उसे उपस्थापित करते हैं युधि

ष्ठिर उवाच से श्रीयुधिष्ठिरजी ने श्रीव्यासजी से कहा हे भगवन् ? छ ऐश्वर्य से युक्त हे महर्षि व्यासजी हे योग साधना करने वालों में श्रेष्ठ अग्रगण्य ब्रह्मर्षिजी वेद वेदाङ्गादि सभी शास्त्रों में पारङ्गत हे मुनीश्वर ? सर्वसारभूत तत्त्व क्या है ? जपने योग्य सर्वोत्कृष्ट मन्त्र कौन सा है ? एवं सायुज्य मुक्ति प्रदान करने वाला मुक्ति का साधनरूप ध्यान किसका करना चाहिये ? तत्त्व चिन्तनशील व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ हे व्यासजी ? यह सब यानी तत्त्व क्या है जपने योग्य एवं ध्यान करने योग्य क्या है मैं आपश्री के श्रीमुख से सुनना चाहता हूँ अतः हे मुनिश्रेष्ठ ? मुझ पर कृपाकर कहें ॥२॥

हे योगिनां श्रेष्ठेति । सम्यङ् निर्णीतदृष्ठतत्त्वस्त्वमसीत्यर्थः । सर्वेषु वेदादिषु शास्त्रेषु विशारदनिपुणेति परब्रह्मशब्दब्रह्मपारगत्वं दर्शितम् । उपदेश्यं पृच्छति कितत्त्वमिति । तत्वं परमार्थभूतं मूलं वस्तु किं भवति ? जाप्यं किं तत्रापि परं जाप्यं किं भवति ? तत्त्वविषयकेषु जप्तव्येषु मन्त्रेषु परो मन्त्र कः इत्यर्थः । ध्यानं किं च तत्रापि मुक्तिसाधनं ध्यानं किं कीदृशतया ध्यानं मुक्तिं ददातीति देवतामन्त्रध्यानान्युक्तानि ॥२॥

श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं ब्रूहि मे मुनिशत्तम ?

卐 श्रीव्यास उवाच 卐

धर्मपुत्र ? महाभाग ? श्रृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥३॥

पूर्वोक्त प्रकार से युधिष्ठिरजी की प्रार्थना सुनकर श्रीव्यासजी ने कहा-हे **धर्मपुत्र ?** हे महाभाग ? आपने जिस परम तत्त्व के विषय में पूछा है उनके विषय में सावधानी से सुनें मैं आपको यथार्थरूप से यानी सर्वशास्त्रानुसार वर्णन कर कहता हूँ ॥३॥

श्रोतुमिति एतत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि मां प्रति ब्रूहीति प्रोत्साहितो व्यास आह धर्मेति हे धर्मपुत्रेति हे महाभागेति ईदृशानामेव परतत्त्वजिज्ञासोद्भवो नान्येषामितिभावः । तत्त्वतो याथार्थ्येन वक्ष्यामि त्वं श्रृण्विति प्रतिज्ञातम् ॥३॥

यत्परं यद्गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम् ।
तदेव परमं तत्त्वं कैवल्यपदकारणम् ॥४॥

युधिष्ठिरजी का जो 'किं तत्त्वम्' वाला श्रीराम तत्त्व विषयक प्रथम प्रश्न है, उसका जवाव श्रीव्यासजी दे रहे हैं-**'परात्परं राममहं भजामि' 'तमीश्वराणां परमं महेश्वरम्'** इत्यादि रूपसे श्रुति एवं स्मृतियों में वर्णन किये अनुसार जो सबसे पर है तथा जो प्रकृति के गुणों से पर-असंबद्ध है एवं कल्याणप्रद तथा विशुद्ध ज्योति स्वरूप है वही परम ब्रह्म तत्त्व श्रीरामजी हैं क्योंकि वेद कहता है **'राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः । राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकम्** अतः एकमात्र तत्त्व श्रीरामजी हैं । एवं परमपद श्रीसाकेतधाम के प्राप्ति के कारणरूप तत्त्व भी श्रीरामजी ही हैं ॥४॥

अथ प्रतिज्ञातं तत्त्वं निर्दिशति यत्परमिति **परं सर्वोत्कृष्टं 'न तत् समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते' इत्यादिश्रुतिषु समभ्यधिकरहिततया निरूपितमित्यर्थः । गुणातीतं गुणान् सत्त्वादीनतिक्रम्य स्थितम् 'साक्षीचेताः केवलो निर्गुणश्च' इतिश्रवणान् । न चैवं निर्विशेषत्वं तत्त्वस्य वक्तुं शक्यम् । उत्तरत्र विशिष्टतया स्तोष्यमाणत्वात् । श्रुतिरपि साक्षित्वादीन् स्वरूपनिष्ठान् धर्मान् स्वीकृत्य तत्र सत्त्वादीन् प्रतिषेधति निर्गुणश्चेत्थादिना । इत्थमेवाह भगवान् पराशरः 'ससर्व भूतप्रकृतिर्विकारगुणांश्च दोषांश्च मुने ? व्यतीतः । अतीतसर्वावरणोखिलात्मा तेनास्तृतं यद् भुवनान्तराले । अनन्तकल्याणगुणात्मकोसौ स्वशक्तिलेशावृतभूतसर्गः' इति । न च निर्विशेषचिन्मात्राद्वितीये वस्तुनि किंचित् प्रमाणं पश्यामः । सर्वेषां प्रमाणानां सविशेषवस्तुविषयत्वात् । तथा हि न तावत् प्रत्यक्षं तत्र प्रमाणं रूपाद्यभावात् । नाप्यनुमानं सद् व्याप्यलिङ्गाभावात् । न चोपमानं तत् सदृशाभावात् । न तु शाब्दं प्रवृत्तिर्निमित्तस्य जात्यादेरभावात् । नाप्यर्थापत्तिः तद् विनानुपपद्यमानार्थाभावात् । न चानुपलब्धिः भावरूपत्वेन तदगोचरत्वादिति । यज्ज्योतिः स्वयं प्रकाशमानमिति चिद्घनत्वं दर्शितम् । अमल मायारहितमिति । अशुद्धसत्त्वात्मकस्थानस्थिततत्वात्तत् सम्बन्धोऽपि परिशुद्धं शिवं सदैव मङ्गलस्वरूपमिति । परमानन्दरूपत्वं व्यक्तं तेन कालकृतपरिमाणापक्षप्रतिषेधः ।**

तथा च 'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म' इत्यादिश्रुतिसिद्धचित् सुखस्वरूपगुणशालित्वं सिद्ध्यति । वक्षति चैवमग्रे 'विभुं चिदानन्दमयं स्वरूपमिति । श्रीरामं

चिन्मयानन्दमयविग्रहमिति च एवमादि ईदृशं यत् तदेव परमं तत्त्वं तदेव कैवल्यपदस्य त्रिपाद्विभूतेः कारणं तत्प्रदमित्यर्थः । तथा च निखिलहेयप्रत्यनीकानन्तकल्याणगुणविग्रहवत् चित् सुखस्वरूपं तत्वं तच्च श्रीराम एवेति व्यक्तं भाति ॥४॥

श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्म संज्ञकम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदोविदुः ॥५॥

'किं परं जाप्यम्' इस दूसरे प्रश्न के उत्तर में कहते हैं श्रीरामचन्द्रजी का तारक या ब्रह्म तारक नामवाला 'श्रीराम' यह महामन्त्र ही परम श्रद्धा के साथ सदा जपनीय है जो ब्रह्महत्या आदि अनन्त महापापों का भी नाश करनेवाला है इसप्रकार वेद तत्वों को जानने वाले तत्त्वज्ञ मुनि लोग कहते हैं ॥५॥

एवं मन्त्रदैवतश्रीरामस्वरूपमभिधाय तन्मन्त्रस्वरूपमाह-श्रीरामेति-एतेन रामतारकाख्यः षड्वर्णो निर्दिष्टः । तत्स्वरूपानिर्देशस्तु अतिरहस्यत्वात् तारयति संसारसागरादिति तस्यान्वर्था संज्ञाभिमता । ब्रह्मणः संज्ञा सम्यग् ज्ञानमनुभवो यस्मात्तादृशं विशेषणाभ्यामविद्यानिवारणपूर्वकं भगवदानन्दत्वमुक्तं तेन मन्त्रस्यापि देवतावत् समसामर्थ्यं व्यक्तम् । अथ रुच्युत्पादनायानुषङ्गिकं फलमाह-ब्रह्महत्यादीति । मुख्यफलं तु तारकं ब्रह्मसंज्ञकमित्युक्तं न चेदं स्तुतिमात्रमपितु वास्तवमेवेत्याह इति वेदविदो विदुरिति ॥५॥

श्रीराम रामेति जना ये जपन्ति च सर्वदा ।
तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ॥६॥

जो जन-साधकवर्ग श्रीराम श्रीराम सर्वदा इसप्रकार जप करते हैं उन साधकों को ऐहिक साधन भोगविलास का साधन एवं श्रीरामसायुज्य मुक्ति भी प्राप्त हो जाती है इसमें संशय नहीं है ॥३॥

इत्थं श्रीराममन्त्रमहिमानमुक्त्वा तन्नाममहिमानमाह श्रीरामेति च शब्दाच्चिन्तयन्ति च भुक्तिरैहिकं सुखं धनदारपुत्रराज्यादिलाभं मुक्तिश्च संसारछेदपूर्विका श्रीरामपदप्राप्तिः ॥६॥

स्तवराजं पुराप्रोक्तं नारदेन च धीमता ।

तत्सर्वं सम्प्रवक्ष्यामि हरिध्यानपुरः सरम् ॥७॥

'किं परं ध्यानम्' इस तीसरे प्रश्न के उपक्रम रूपमें श्रीव्यासजी कहते हैं हे धर्मराजजी श्रीरामतारक मन्त्र जप के अन्त में पाठ करने योग्य श्रीरामस्तवराज जोकि बुद्धिशाली श्रीनारदजी एवं श्रीसनत्कुमारजी ने पूर्वकाल में ही कह रखा है उसको श्रीरामचन्द्रजी के ध्यान कथनपूर्वक सम्पूर्ण वर्णन करता हूँ उसे सुनें ॥७॥

षड्वर्णजपान्ते कर्तव्यो यः स्तवः स तु श्रीनारदेनोक्त एषः श्रीरामस्तव राजाभिध इति दर्शयति स्तवराजमिति नारदेन चेति च शब्दः कुमारप्रोक्तत्वस मुच्चयार्थः । श्रीमता परविद्याशालिना छान्दोग्यनिर्दिष्टसनत्कुमारलब्धपरविद्ये नेत्यर्थः । तत्सर्वमिति अङ्गव्यासादेरनुक्तस्यापि परिग्रहः । भक्तिमन्तरा तदुक्तौसा मर्थ्यं न स्यादिति व्यञ्जयति हरिरिति ॥७॥

तापत्रयाग्निशमनं सर्वाघौघनिकृन्तनम् ।
दारिद्र्य दुःखशमनं सर्वसम्पत्करं शिवम् ॥८॥

यह श्रीरामस्तवराज आध्यामिक आधिदैविक एवं आधिभौतिक रूप तीन प्रकार के अग्नि-सर्वदा जीवों को जलाने दुःख देनेवाले क्लेशस्वरूप अग्नि की शान्त करने वाला तथा सम्पूर्ण पापों के समूहों को काटने-नष्ट करने वाला एवं सभी प्रकार के सम्पत्तियों को प्रदान करनेवाला और सभी प्रकार के दरिद्रपना एवं दुःखों को नाश करनेवाला तथा कल्याणों को प्रदान करनेवाला है ॥८॥

श्रोतृप्रवृत्तये स्वतवराजस्य फलं दर्शयति-तापत्रयेति । **चतुर्भिः पदैरानु षङ्गिकफलमुक्तम् ॥८॥**

विज्ञानफलदं दिव्यं मोक्षैकफलसाधनम् ।
नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि रामं कृष्णं जगन्मयम् ॥९॥

विज्ञान स्वरूप विशिष्ट फल को प्रदान करने वाला प्रकृति के हेय गुण से रहित दिव्य गुण वाला सायुज्य मुक्ति रूप फल का प्रधान साधनभूत यानी मुक्ति का एकमात्र कारण स्वरूप एवं जगन्मय यानी संसार के धर्मों में प्रधान साधनभूत यानी मुक्ति का एकमात्र कारण स्वरूप एवं जगन्मय यानी संसार के धर्मों में प्रधान धर्मभूत तथा इन्द्र नीलमणि के समान श्याम सर्व वाले परात्पर ब्रह्म श्रीदशरथ

नन्दन श्रीरामजी को नमस्कार करके सब कामनाप्रद श्रीरामस्तवराज को कहता हूँ ।।९।।

अथ मुख्यफलन्तु विज्ञानफलदं मोक्षैकफलसाधनमिति द्वाभ्यां निर्दिष्टं विज्ञानं श्रीरामस्य सपरिकरस्यानुभवः तद् रूपं फलं ददाति । मोक्षं संसारोच्छेदपूर्वकस्तत्सा क्षात्कारस्तद् रूपमेकं मुख्यं यत्फलं तस्य साधनमुपायभूतम् ईदृशं स्तवराजमहं श्री रामं नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामीति तत्प्रणामस्तत्पूरको भविष्यतीतिभावः । कीदृशं राम मित्यपेक्ष्यायामाह कृष्णं श्यामलं सर्वचित्ताकर्षकमिति वा । जगन्मयं जगद् व्यापकं तैलमयस्तिल इतिवत् प्रयोगः ।।९।।

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यगे ।
स्मरेत् कल्पतरोर्मूलेरत्नसिंहासनं शुभम् ।।१०।।

सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी के ध्यान का साधन करने वाले साधक को अतिरमणीय मोक्षदायिनी पुरियों में प्रधान श्रीअयोध्या नगरी में अनन्त रत्नों से वने मण्डप के मध्य भाग में कल्पवृक्ष के मूल-नीचे अति सुन्दर रत्नसिंहासन का स्मरण करना चाहिये ।।१०।।

अथ स्तवराजप्रतिपाद्यस्य श्रीरामस्य धाम तत्र योगपीठं च दर्शयति-अयोध्ये ति-अविद्यादिदोषैर्योद्धुमशक्येत्ययोध्या तदाख्ये नगरे तन्मध्ये इत्यर्थः । कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं ध्यायेत् कीदृशे कल्पतरोर्मूले रत्नमण्डपमध्यगे इति ।।१०।।

तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नानारत्नैश्च वेष्टितम् ।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्त्रादित्यतेजसम् ।।११।।

पूर्व वर्णित उस रत्नसिंहासन के मध्य में आठ दलवाले रत्नों से युक्त पद्म का आसन जो नाना प्रकार के बहुमूल्य अनेक रत्नों से वेष्टित-समलंकृत है के मध्य भाग में श्रीदशरथजी के पुत्र के रूपमें आविर्भूत सहस्त्रों सूर्यों के तेज से भी अधिक तेज सम्पन्न श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण यानी ध्यान करे ।।११।।

अथ सिंहासनस्थं श्रीरामं ध्यायेदित्याह-तन्मध्येष्टदलमिति तन्मध्ये रत्नसिंहास नमध्ये रत्नमयपद्मासनं स्मरेत् तस्य पद्मासनस्य मध्ये दाशरथिं दशरथराजकुमारं श्रीरामचन्द्रं स्मरेत् चिन्तयेत् । कीदृशं सहस्त्रादित्यतेजसं परानभिभाव्यत्वं तेजः तथात्वं सहस्त्रादित्यतुल्यमितिभावः । सहस्त्रादित्यस्य यत्तेजो तद् दधानमिति तु नार्थः माधुर्यविरोधात् ।।११।।

पितुरङ्कगतं राममिन्द्रनीलमणिप्रभम् ।

कोमलाङ्गंविशालाक्षंविद्युद्वर्णाम्बरावृतम् ॥१२॥

पुनः श्रीरामचन्द्रजी पिता चक्रवर्तिराजा श्रीदशरथजी के गोद में विराजमान हैं इन्द्र नीलमणि के प्रभा के समान प्रभावाले हैं कोमल अङ्गवाले हैं विशाल आँखवाले हैं विजली के सदृश चमकीले दिव्य वस्त्र धारण किये हुये हैं ऐसे परम दिव्य श्रीविग्रह वाले श्रीरामजी का ध्यान करे ॥१२॥

एवं धामसिंहासनस्थपद्मासनस्थं श्रीरामं ध्यात्वाथ माधुर्य्यैश्वर्यगुणकं तं ध्यातु मुपक्रमते । तत्र माधुर्यं पारमैश्वर्ये व्यक्ते च तत्र मनुष्यरीत्यनतिक्रमः यथा सेतुबन्धनं शक्रादिदुर्जयरावणादिपराभवायोध्याजनसान्तानिकलोकनयनादिस्वेतरसमस्तदुष्कर कर्मणि नररीत्यनतिक्रमणम् । ऐश्वर्यं तु मनुष्यरीतिमनपेक्ष्य पारमैश्वर्यव्यक्तिः त्रिवेणी निगूढसारस्वतप्रवाहवन्माधुर्यनिगूढमेव श्रीरामे वर्तमानं कदाचित् किंचिद् व्यक्तिः भवति यथा रावणादेरंगुल्यग्रेण तान् हन्यामिति प्रतिज्ञा सा चानन्तवीर्य्यमित्यत्र दर्श यिष्यते, तत्र माधुर्यज्ञानं पारमैश्वर्य्येनुसंहितेऽपि निजभावस्थितिकृतधर्मविशेषः यथा श्रीकौसल्यादीनाम् ऐश्वर्यज्ञानं तु तस्मिन्ननुसंहिते सिद्धान्तपीठकं तत्र माधुर्य्यप्रधानं बाल्यावस्थं श्रीरामं ध्यायति पितुरिति चतुर्भिः पितुर्दशरथस्य स्फुटार्थमन्यत् ॥१२॥

भानुकोटिप्रतीकाशं किरीटेन विराजितम् ।
रत्नग्रैवेयकेयूररत्नकुण्डलमण्डितम् ॥१३॥

श्रीरामचन्द्रजी कोटिसूर्य के समान प्रभावाले हैं किरीट शिर में मुकुट के साथ धारण करनेवाले आभूषण को धारण किये हुये हैं एवं रत्नों से जटित गले में पहनने वाले हार आभूषणों को धारण किये हुये हैं तथा केयूर हाथों के आभूषण बाजुबन्ध आदि को धारण किये हैं एवं विविध रत्नों द्वारा निर्मित कुण्डल कानों के आभूषण से सुशोभित हैं ॥१३॥

भानुकोटिवत् कोटीति पूर्ववत् ग्रैवेयं कण्ठभूषणं केयूरे अङ्गदे । स्फुटमन्यत् ॥१३॥

रत्नकङ्कणमञ्जीरकटिसूत्रैरलंकृतम् ।
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम् ॥१४॥

श्रीरामजी रत्नों से जटित कङ्कण एवं रत्नों से सुसज्ज मञ्जीरपायजेव तथा रत्नों से समलंकृत कटि सूत्र-कटिबन्ध से समलंकृत हैं तथैव श्रीवत्सचिह्न एवं कौस्तुभ मणि से वक्षस्थल सुशोभित है तथा मुक्ताओं के हार से जिनका स्वरूप अतिशोभायमान है ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करे ॥१४॥

मंजीरे नूपुरे कटिसूत्रं कनकसूत्रग्रथितं युग्मभूतकटिबन्धनदोरकम् । महापुरुषत्वद्योतकः वक्षोवर्तिपीतरोमात्मकचिह्नविशेषः श्रीवत्सशब्देनोच्यते । यद्यपि हार शब्दोमुक्तासंदर्भेनुशिष्ट हारोमुक्तापलाविति श्वप्रकाशात् रत्नान्तरयुक्तमुक्ताहारवाचकः तथापि मुक्ताशब्दोऽत्र रत्नान्तरासंपर्कद्योनार्थः । स्फुटमन्यत् ॥१४॥

दिव्यरत्नसमायुक्तं मुद्रिकाभिरङ्कृतम् ।
राघवं द्विभुजं बालं राममीषत्स्मिताननम् ॥१५॥

श्रीरामचन्द्रजी दिव्य रत्नों से निर्मित पदिक से युक्त हैं एवं अनेक रत्नों से जटित मुद्रिकाओं से सुशोभायमान हैं वे रघुकुल में अवतरित दो हाथवाले सदा बाल्यावस्था में ही शोभित होने वाले एवं थोडीसी मुस्कुराहट से युक्त सर्वमनोहारी हैं ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करें ॥१५॥

दिव्यरत्नैर्बहुविधरत्नजटितैः मुद्रिकाभिः पदकैः समायुक्तं द्विभुजं बाहुद्वयशोभितमित्यर्थः । द्विभुत्वज्ञानं च पारमार्थिकं 'स्थूलमष्टभुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम् । द्विभुजं तु परं प्रोक्तं रूपमाद्यमिदं हरेः' इत्याद्युक्ते चतुर्भुजत्ववत् द्विभुजत्वस्यापि शास्त्रसिद्धत्वात् स्फुटमन्यन् ॥१५॥

तुलसीकुन्दमन्दारपुष्पमाल्यैरलङ्कृतम् ।
कर्पूरागरुकस्तूरीदिव्यगन्धानुलेपनम् ॥१६॥

श्रीरामजी तुलसी कुन्दमन्दार पुष्पों की मालाओं से सुशोभायमान हैं एवं कपूर अगर कस्तूरी के चूर्णों से बने दिव्य गन्ध अङ्गराग से अनुलेपित होने से प्रदीप्त श्रीरामजी का ध्यान करें ॥१६॥

अथ पौगण्डावस्थस्य तस्य ध्यानमाह तुलसीत्याद्यैश्चतुर्भिः । इह तुलस्यादिधारणेन चातुर्य्यव्यक्ते पौगण्डं लभ्यते ॥१६॥

योगशास्त्रेष्वभिरतं योगेशं योगदायकम् ।
सदाभरतसौमित्रिशत्रुघ्नैरुपशोभितम् ॥१७॥

श्रीरामचन्द्रजी योगशास्त्र में पारङ्गत हैं एवं योग के स्वामी हैं तथैव योग को प्रदान करनेवाले हैं और सर्वदा श्रीभरत श्रीलक्ष्मण तथा श्रीशत्रुघ्नजी द्वारा सेवित एवं सुशोभायमान हैं ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करें ॥१७॥

तदेव स्फुटयितुं विशिनष्टि-योगेति युज्यतेऽनेनेति योगो मैत्रीरसस्तच्छास्त्रेष्व

भिरतं तत्प्रकारप्रवीणमित्यर्थः । यद्वशान्मैत्रीवतां सुग्रीवादीनां साधनं न्यायानपेतं बालिवधं चकार । योगीशं मैत्रीरसस्वामिनं सर्वज्ञादिवदसौ च तस्य धर्मः श्रुतिश्चाह 'सर्वस्य शरणं सुहृत्' इति । योगदायकं स्वतरणयोगदायकमीषत्याभिमुख्ये सतीमैत्री रसप्रदं यदुक्तं स्वेनैव 'मित्रभावेन संप्राप्तं न त्यजेयं कथंचनेति मैत्रीरसविज्ञातत्त्व मुदाहरणत्वेन विशिनष्टिसदेति । उपाधिकं शोभितमित्यर्थः ॥१७॥

विद्याधरसुराधीशैः सिद्धगन्धर्वकिन्नरैः ।
योगीन्द्रैर्नारदाद्यैश्चस्तूयमानमहर्निशम् ॥१८॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी विद्याधरों एवं इन्द्र द्वारा स्तुति किये जा रहे हैं तथा सिद्धों गन्धर्वों एवं किन्नरों और श्रेष्ठ योगियों एवं नारद सनकादि देवर्षियों से रातदिन वेदमन्त्रों से सादर स्तुति किये जा रहे हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करें ॥१८॥

विद्याधरादयः तद् गन्धर्वक्रीडाकौशलमोहितास्तत्सन्निधिमनवरतमनुवर्तन्ते । यदुक्तम्-गान्धर्वेषु मुख्यः श्रेष्ठो बभूव भरताग्रज इति । योगीन्द्राश्च समाधिगम्य पर तत्त्वं श्रीरामात्मना चक्षुर्गाह्यं विदित्वा कृतकृत्यास्सन्तस्तमेवानिशं स्तुवन्ति ॥१८॥

विश्वामित्रवशिष्ठादिमुनिभिः परिसेवितम् ।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैः योगिवृन्दैश्चसेवितम् ॥१९॥

वे श्रीरामजी श्रीविश्वामित्रजी एवं श्रीवशिष्ठजी आदि मुनियों से सर्वदा सर्वतोभाव से सुसेवित हैं एवं सनक सनन्दन सनातन तथा सनत्कुमार आदि श्रेष्ठ मुनियों तथा योगियों के समुदाय से सदा सेवित हैं ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करें ॥१९॥

विश्वामित्रवशिष्ठादिमुनिभिः परिसेवितं नारदादयो विश्वामित्रादयश्च मुनयः अभीष्टबुद्ध्या तमेव श्रीरामं सेवन्ते । सनकादिमुनिश्रेष्ठाः योगमोहिताः तत्सन्निधिमनु वर्तन्त इत्यर्थः ॥१९॥

रामं रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारदम् ।
मङ्गलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ॥२०॥

वे श्रीरामजी साधक योगियों या सभी समूहों के अन्तःकरण में रमण करने वाले हैं रघुवंशियों में अतिश्रेष्ठ हैं एवं पराक्रमशील हैं तथा धनुर्वेद में पारङ्गत हैं और सभी प्रकार के मङ्गलों के मूलस्थान हैं तथा देवं-देदिप्यमान स्वरूपवाले हैं एवं राजीवलोचन कमलदल के समान नेत्रवाले हैं ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करें ॥२०॥

अथ कैशोरावस्थस्य तस्य ध्यानमाह राममिति द्वाभ्याम् । अत्र रघुवरमित्यादी निविशेषणानि कैशोरं व्यञ्जयन्ति । तत्र तेषां तात्पर्यात् तेन परिकरालंकारः सिद्धः । यदाह भरतः 'विशेषणैर्यत्साकूतैरुक्तिः परिकरस्तु सः' इतिसाभिप्रायानेकविशेषण द्वारा विशेष्यपुष्टिः परिकर इतितदर्थः । मङ्गलायतनमिति । कैशोरे सर्वभक्तसुखो द्वहनात् । अत्र श्रीरामादीनि पदानि स्वरूपतोऽर्थतश्च तुल्यरूपाण्युपात्तानि न तत्र पौनरुक्तिदोषः वस्तुतस्तत्र रागाधिक्यात् । इदमेव रागलक्षणं यत्तद् विषयं पुनः पुनः कीर्त्तयन्नलं प्रत्ययं नाभ्युपैति ॥२०॥

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञमानन्दकरसुन्दरम् ।
कौशल्यानन्दनं रामं धनुर्बाणधरं हरिम् ॥२१॥

वे श्रीरामजी वेदादि सभी शास्त्रों के तत्वों को जाननेवाले हैं, एवं सभी को आनन्द प्रदान करनेवाले तथा अतिसुन्दर हैं, और श्रीकौशल्याजी को आनन्द प्रदान करने वाले हैं, तथा सभी प्रकार के पापों को नाश करनेवाले हैं एवं धनुष तथा बाणों को धारण किये हुये हैं ऐसे श्रीरामजी का ध्यान करें ॥२१॥

सर्वेति-सर्वेषां व्याकरणाभिधानसाहित्यन्यायमीमांसादीनां शास्त्राणामर्थतत्वं जानातीति तम् आनन्दकरश्चासौ सुन्दरश्च तं सौन्दर्येणानन्ददमित्यर्थः ॥२१॥

एवं सञ्चितयेद्विष्णुं यज्ज्योतिरमलं (विभुं) शिवम् ।
प्रहृष्टमानसो भूत्वा मुनिवर्यः स नारदः ॥२२॥

जिन परपुरुष श्रीरामचन्द्रजी की ज्योति अखण्ड दिव्यप्रकाश निर्मल प्रकृति के गुण से रहित एवं कल्याणकारक है तथा व्यापक या विशुद्ध है ऐसे पूर्ववर्णित सर्वेश्वर श्रीरामजी का सम्यक् रूपसे ध्यान करें। मुनियों में श्रेष्ठ प्रसिद्ध उन नारदजी ने भी अति प्रसन्नचित्त होकर ही उन्हीं श्रीरामचन्द्रजी की स्तुति की ॥२२॥

एवमिति-एवं बाल्यादित्रिविधवयो विशिष्टतया स्वभावनानुसारी सर्वो जनो विष्णुं सञ्चिन्तयेदिति सर्वान् प्रति श्रीव्यासोपदेशः । विष्णुं सर्वव्यापकं भावुकानां सर्वेषां युगपत् सन्निहितं ज्योतिः स्वयंप्रकाशस्वरूपम् । अमलं मायामलनिवारकं विभुं सर्वान्तर्यामिणं नारदोपास्यत्वाच्च सर्वोपि जनस्तमेवोपासीतेति वदन् 'स्तव राजः पुराप्रोक्तो नारदेन च धीमता' इतिपूर्वोक्तेन सह संगतिं करोति । प्रहृष्टमानसः मुनिवर्य्य इति श्रीरामतत्वनिष्णातत्वादित्याशयः ॥२२॥

सर्वलोकहितार्थाय तुष्टाव रघुनन्दनम् ।

कृताञ्जलिपुटोभूत्वा चिन्तयनद्भुतं हरिम् ॥२३॥

सम्पूर्ण लोक का हित करने के लिये दोनों हाथों के अञ्जलियों को बांधकर अघटित घटनाओं को भी घटित करनेवाले अचिन्त्य पराक्रमशील सर्वपाप हारक श्रीरामजी का चिन्तन करते हुये रघुकुल को आनन्दित करनेवाले श्रीरामजी की स्तुति की ॥२३॥

सर्वलोकेति-यथा **प्रकटिते स्तवराजे तेन सर्वे कृतार्थाः स्युरितिभावः । अद्भुतमिति विज्ञानानन्दस्वरूपत्वेऽपि विलक्षणमूर्तित्वमित्यर्थः ॥२३॥**

यदेकं यत्परं नित्यं यदनन्तं चिदात्मकम् ।

यदेकं व्यापकं लोके तद्रूपं चिन्तयाम्यहम् ॥२४॥

जो श्रीरामजी एक रूप हैं एवं सबसे पर हैं तथा सर्वदा विद्यमान रहते हैं और जिनका अन्त नहीं है, एवं चिदात्मक यानी स्वरूप एवं गुण द्वारा स्वप्रकाश रूप तथा ज्ञान के आकार स्वरूप हैं एक यानी मुख्य रूपसे स्थित एवं सर्वलोक व्यापक हैं उन सर्वात्मरूप परमतत्त्व श्रीरामचन्द्रजी का चिन्तन यानी ध्यान करता हूँ ॥२४॥

प्रथम स्वरूपनिरूपणपूर्वकदेशकालाद्यपरिच्छन्नतया श्रीरामं ध्यायति यदेकमिति-**तद् रूपमहं चिन्तयामि रूप्यते निरूप्यते इति रूपं परमतत्वमित्यर्थः । कीदृशं तत् यदेकं चिद् वस्तुशारीरकात् तस्माद् वस्त्वन्तरानतिरेकात् अद्वितीयमित्यर्थः । यत्परं । चिंदचिद्वस्तुभ्यामुत्कृष्टमित्यर्थः । नित्यं सदैकरसं चिदचितो धर्मसंकोचविकाशाभ्यां स्वरूपेण च परिणामात् तत्त्वस्य कदाचिदपि स नास्ति । अनेन कालापरिच्छेदोऽभिहितः । यदनन्तमिति देशापरिच्छेदः चिदात्मकमिति स्वरूपतोगुणतश्च ज्ञानाकारत्वमिति वस्तुनिर्देशः । पुनर्यदेकमिति स्वेतरेषांसर्वेषांमुख्यमित्यर्थः 'एके मुख्यान्यकेवलाः' इत्यनुशासनात् । व्यापकं लोकं व्याप्य तस्माद् बहिरपि स्थितमित्यर्थः । 'स भूमि ँ विश्वतो वृत्वा अत्यतिष्ठद्दशांगुलम्' इतिपुरुषसूक्तात् । भूमिमितिलोकत्रयलक्षणा ॥२४॥**

विज्ञानहेतुंविमलायताक्षंप्रज्ञानरूपं स्वसुखैकहेतुम् ।

श्रीरामचन्द्रंहरिमादिदेवं परात्परं राममहं भजामि ॥२५॥

विज्ञान का कारणभूत यानी दुःसंगति से श्रीराम विमुखतया जीवों का धर्मभूत ज्ञान नष्टप्राय होता है उसे अपनी कृपा से अपनी ओर करनेवाले परम कारुणिक एवं विमल तथा दीर्घनेत्रवाले कभी भी संकोच विकाश न होनेवाले सुस्थज्ञान के आधारभूत तथा स्वसुख ब्रह्मानन्दस्वरूप सुख के एकमात्र कारणभूत हरि-दुःख के कारण स्वरूप

पाप का अपहारक श्रीरामजी को जो कि आदि देव यानी त्रिपादविभूति एवं लिलाविभूति में भीं अपनी इच्छानुसार क्रीडा करनेवाले परात्पर रूपसे स्थित सर्वावतारी श्रीरामचन्द्रजी इस नाम से सर्वप्रसिद्ध श्रीरामजी को मैं भजन यानी श्रीरामतत्त्व साक्षात्कार करने के लिये श्रीरामजी का ध्यान करता हूँ ॥२५॥

अथोक्तस्वरूपस्य तस्य तस्याभिधानं निर्दिशन् विशिनष्टि विज्ञानेति-विज्ञानं जीवस्य धामभूतं ज्ञानं यत् तत् वैमुख्येन नष्टमासीत् तस्य हेतुं सांमुख्य दानेन प्रकाशकमित्यर्थः ।

'प्रज्ञा च तस्मात् प्रसृतापुराणी' इति श्रवणात् । विमले उज्ज्वले आयते आकर्णविस्तीर्णे अक्षिणी यस्य तमिति रूपासक्तिर्दर्शिता । प्रज्ञानरूपमिति प्रशब्देन संकोचविकाशौ निवार्येते । परिच्छेदो वा तादृशं ज्ञानं रूपं धर्मो विग्रहो वा यस्य तं स्वसुखैकहेतुं स्वमसाधारणं यत् सुखं स्वसाक्षात्कारलक्षणं तस्यैकहेतुं मुख्यं कारणम् । 'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन । यमेवैष वृणुते तेन लभ्य स्तस्यैव आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्' इति कठोपनिषद् श्रुतेः । 'श्रीरामचन्द्रमिति' यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानिति श्रीरामतापिन्या तन्नाम्ना बहुकृत्वः समुद्घुष्टमित्यर्थः । हरिं कारुण्येन संसारदुःखं सौन्दर्येण मनश्च हरति स्वभक्तानामिति तथाभूतं देवं क्रीडापरं रासलास्यनर्मप्रहेलिकायुद्धादिप्रधानमित्यर्थः । अथ देवं द्युतिमन्तं कन्दर्पवदनिर्वचनीयरूपमितियावद् । यद् वा स्तवनार्हं स्तवाराध्यं विजयिनं चेत्यर्थः । आदिश्चासौ देवश्चतम् ईदृशं सर्वेभ्यः पूर्वसिद्धं चेति यावत् । परात्परं परात् सर्वश्रेष्ठाद् रुद्रविरञ्च्यादेरपि परं तस्यापि सेव्यमित्यर्थः । रामं योगीन्द्रचित्तविश्रामस्थानं रमन्ते योगीनोऽस्मिन्निति व्युत्पत्तेः । श्रुतिश्च एवमाह 'रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मणि । इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते' इति ॥२५॥

कविं पुराणं पुरुषं पुरस्तात् सनातनं योगिनमीषितारम् ।
अणोरणीयांसमनन्तवीर्यं प्राणेश्वरं राममसौ ददर्श ॥२६॥

जो श्रीरामजी कवि सर्वज्ञ हैं एवं पुराण सनातन पुरुष हैं तथा पहले भी थे अब भी हैं ऐसे सनातन अनादि अनादि देव जो अपने भक्त के इच्छित वस्तुओं को पूर्ण करनेवाले एवं ईशितार-चित्तत्त्व तथा अचित्तत्त्व दोनों को नियन्त्रण करनेवाले तथा अणु परिमाण से भी अतिसूक्ष्म और अनन्त वीर्य पराक्रमवाले हैं और प्राणेश्वर अर्थात् आराधक जनों के प्राण से भी प्रिय श्रीरामजी यानी सत् चित् एवं आनन्द पद से कथित परात्पर

परब्रह्म दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्रजी को नारदजी ने देखा ॥२६॥

एवं ध्यायतो देवर्षेः श्रीरामं साक्षाद् बभूवेत्याह कविमिति । असौ नारदो रामं ददर्शेत्यनुषंगः कीदृशं कविं सर्वज्ञं 'यः सर्वज्ञः सर्ववित्' इति श्रुतेः । एवमपि यदस्य क्वचित् संमुग्धत्वं दृश्यते तत् खलु तद् रूपान् अतिरेक्य इव मन्तव्यम् । इतरस्य तस्मिन्नसत्वात् । अनुकृतिरूपं तदित्यपरे तेन योषिद् गर्भवासस्तु भगवत्कृतत्वेन तत्र लौकिकत्वं मन्तव्यम् । पुराणं पुरापि नवं पुरुषं अन्तर्यामिणं पुरिप्राणनिचये शेत इति व्युत्पत्तेः पुराणत्वे हेतुः पुरस्तादिति पूर्वमपि स्थितमित्यर्थः । तत्रापि हेतुः सनातनमिति । यतः सनातनमतः नित्यिं पुरापि स्थितमित्यर्थ । योगिनं योगवन्तं नित्य पार्षदैर्हनुमादादिभिः सह नित्यं वर्तमानमित्यर्थः । ईषितारं तैरपि स्वामितया आराध्यमानमित्यर्थः नियन्तारमिति वा । अणोरणुपरिमाणादपि जीवादेरणीयांसंततोऽपि सूक्ष्ममित्यर्थः, इतरथा तद् व्याप्तिर्नघटेत । अणुवस्तुव्याप्तिखलु द्वेधा । तस्य दशदिक् सम्बन्धो हि व्याप्ति इति केचित् ततोऽप्यतिसौक्ष्मेणान्तः प्रवेश इत्यपरे । इतरथा 'यच्च किञ्चित् जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा । अन्तर्वहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः ।' इति श्रुतिव्याकोपापत्तिः । अनन्तवीर्यमसंख्येयपराक्रमं । यदुक्तं स्वयमेव 'स दुष्टो वाप्यदुष्टो वा किमेष रजनीचरः । सूक्ष्ममप्यहितं कर्तुं मम शक्तः कथंचन । पिशाचान् दानवान् यक्षान् पृथिव्यां ये च राक्षसाः । अंगुल्यग्रेण तान् हन्यामिच्छन् हरिगणेश्वर' इति । प्राणेश्वरं स्वजनानां प्राणनाथं प्राणापेक्षया अतिस्नेहास्पदमिति यावत् 'प्राणशरीरम्' इतिश्रुतावपि भक्तानां प्राणतुल्यं शरीरं यस्यासौ प्राणशरीर इत्येके व्याचक्षते ॥२६॥

卐 श्रीनारद उवाच 卐

नारायणं जगन्नाथमभिरामं जगत्पतिम् ।
कविं पुराणं वागीशं रामं दशरथात्मजम् ॥२७॥

पूर्व वर्णनानुरूप श्रीरामजी को देखकर श्रीनारदजी बोले जो नारायण-सभी जनों के अन्दर निविास करनेवाले एवं जगत में स्थित जनों से धर्म अर्थ काम एवं मोक्ष के लिये प्रार्थनीय ऐसे अभिराम सर्वाङ्ग सुन्दर अपने दर्शन मात्र से ही सभी स्त्री व पुरुष को आनन्द प्रदान करने वाले जगतपत्ति-अन्य साधारण धर्मों का त्याग कर सर्वतोभाव से भजन करने योग्य सर्वज्ञ एवं सनातन तथा वागीश सरस्वती के स्वामी या उसके प्रेरक श्रीरामजी यानी दर्शन मात्र से ही परमसाधक वीतराग महर्षियों को भी मोहित करनेवाले

चक्रवर्ति राजा दशरथ के पुत्र को सादर प्रणाम करता हूँ ॥२७॥

एवं श्रीरामं साक्षात्कृत्य तं प्रणमतीत्याह-श्रीनारदउवाचेत्यादिना-नारायण मित्यादीनां द्वितीयान्तानां 'मनसा शिरसा नित्यं प्रणमामि' इत्यनेन परस्थेनान्वयः । रामं प्रणमामि कीदृशं नारायणं सर्वतत्वान्तस्थम्-

'नराज्जातानि तत्त्वानि नाराणीति विदुर्बुधाः ।
तस्य तान्ययनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥'

इतिस्मरणात् । कारणार्णवशयमिति वा

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।
ता यदस्यायनं प्रोक्तं तेन नारायणं स्मृतः ।' इति स्मरणात्

'संक्षिप्यहि पुरालोकान् मायया स्वयमेव हि ।
महार्णवेशयानोऽप्सु मां त्वं पूर्वमजीजनः ॥
पद्मेदिव्येऽर्कसंकाशे नाभ्यामुत्पाद्यमामपि ।
प्राजापत्यं त्वया कर्म मयि सर्वं निवेशितम् ॥
सोऽहं विन्यस्तभारोहि त्वामुपास्य जगत्पतिम् ।
रक्षां विधत्स्व भूतेषु मम तेजस्करो भवान् ॥

इत्यादिमहर्षिवचनाच्च । जगन्नाथं जगति प्राणिभिः पुरुषार्थप्रदत्वेनाभ्यर्थ नीयम् । सुखप्रार्थ्यत्वमाह-अभिराममिति । सर्वांशेन कमनीयमित्यर्थः । जगत्प्रार्थ्यत्वे हेतुः जगत्पतिमिति यतः जगत्प्रभुमित्यर्थः । प्रार्थनाभिज्ञत्वमाह कविमिति सर्वज्ञ मित्यर्थः । वागीशं सरस्वतीकान्तं स्फुटमन्यतः सरस्वत्या लक्ष्मीसपत्नीत्वं तु 'स्पर्धा मुद्धूय भवने लक्ष्मीर्वाणी मुखे वसेत्' इति ब्रह्मयामलोक्तश्रीरामत्रैलोक्यमोहन कवचवचनात् ।

'एक्ता भार्या प्रकृतिमुखरा चंचला च द्वितीया
पुत्रस्त्वेको भुवनविजयी मन्मथो दुर्निवारः ।
वासस्थानं किलजलनिधिस्तत्रशय्या फणीशः
स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं दारुभूतो मुरारिः ॥

इत्यभियुक्तोक्तेश्च ॥२७॥

राजराजं रघुवरं कौशल्यानन्दवर्धनम् ।

भर्गं वरेण्यं विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम् ॥२८॥

जो राजाओं के भी राजा हैं एवं रघुवंशियों में श्रेष्ठ तथा माता श्रीकौशल्याजी के आनन्द को बढानेवालें हैं और भर्ग यानी सूर्य के तेज को प्रकाशित करनेवाले अखण्ड ज्योतिरूप हैं एवं वरेण्य अर्थात् अग्निसूर्यादि सभी तेजों के प्रकाशक होने से सभी से श्रेष्ठ एवं गायत्री मन्त्र के लक्ष्यभूत प्रतिपाद्य होने से सभी जनों से सेवनीय हैं तथैव विश्वेश यानी सभी जनों के स्वामी शुभ एवं अशुभ कर्माधीनों के प्रेरक हैं ऐसे श्रीरघुनाथजी एवं जगद्गुरु अर्थात् जीवों को अभ्युदय तथा निःश्रेयस के उपदेशक हैं उन श्रीरामचन्द्रजी को सादर प्रणाम करता हूँ ॥२८॥

राजराजमिति **सर्वराजेश्वरमित्यर्थः । गायत्रीप्रतिपाद्यत्वमाह** भर्गमिति **रविबिम्बान्तस्थतेजः स्वरूपमित्यर्थः । वरेण्यं सर्वेषां तेजसां प्रकाशकत्वेन तेभ्यः सर्वेभ्यः श्रेष्ठं** स्वप्रकाशात्मकमित्यर्थः । यदुक्तमाग्नेये गायत्री व्याख्याने 'तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म भर्गस्तेजो यतः स्मृतः । भर्गःस्याद् भ्राजत इति बहुलं छन्दसीरितम् । वरेण्यं सर्वतेजोभ्यः श्रेष्ठं वै परमं पदम्' इति । रघुनाथं रघुवरं वंश्यश्रेष्ठं जगद्गुरुम् अभ्युदय निःश्रेयसोपायप्रकाशनेन जगद्धितकारणमित्यर्थः स्फुटमन्यत् ॥२८॥

सत्यं सत्यप्रियं श्रेष्ठं जानकीवल्लभं विभूम् ।
सौमित्रिपूर्वजं शान्तं कामदं कमलेक्षणम् ॥२९॥

जो सर्वदा एक स्वरूप से रहते हैं एवं सत्यप्रिय हैं तथा सर्वश्रेष्ठ हैं और श्री जानकीजी के अतिप्रिय हैं एवं सर्वव्यापक हैं तथा सुमित्रा पुत्र श्रीलक्ष्मणजी के बडे भाई हैं और शान्तस्वरूप या परमानन्दमय हैं एवं कामद यानी साधकों की सभी इच्छाओं को पूर्ण कर देनेवाले हैं एवं कमल के समान उज्ज्वल तथा प्रसन्न नयनवाले हैं ऐसे श्रीरामजी को सादर प्रणिपात है ॥२९॥

सत्यमिति **सदैकरसं त्रैकालिकध्वंसाग्रतियोगिनमित्यर्थः । सत्यप्रियं सत्यवाक्यवल्लभं यदुक्तं स्वयमेव 'अनृतं नोक्तपूर्वं मे न च वक्ष्ये कदाचन' इति । जानकीवल्लभमिति तत्पुरुषो बहुव्रीहि वा जानक्याः प्रेमविषयं तस्यां प्रेमवन्तं वेत्यर्थः । यदुक्तं 'अनन्या राघवेणाहं भास्करस्य प्रभा यथा' इति । विभुं प्रतीयमानेनापि रूपेण व्यापकं बहुषु ध्यातृषु युगपदाविर्भावात् शान्तं बहिर्विषयेभ्यो निवृत्तं यदुक्तं-सत्यवादी महेष्वासो वृद्धसेवी जितेन्द्रियः' इति । कामदं भक्तावांछा पूरकम् यदुक्तं-'द्विशरा**

न्नाभिसन्धत्ते द्विस्थापयति नाश्रितान् । द्विर्ददाति न चार्थिभ्यो रामो द्विर्नाभिभाषते' इति । कमलेक्षणं तद्वत् प्रसन्नोज्ज्वलनेत्रम् ॥२९॥

आदित्यरविमीशानं घृणिं सूर्यमनामयम् ।
आनन्दरूपिणं सौम्यं राघवं करुणामयम् ॥३०॥

जो सूर्य के भी प्रकाशरूप सूर्य हैं एवं ईशान सभी के नियन्ता हैं तथा घृणि यानी अति प्रकाशमान हैं और सूर्यरूप विभूतिवाले एवं अनामय अविद्या आदि सभी दोषों से रहित हैं तथा सभी साधकों को आनन्द प्रदान करनेवाले हैं एवं सौम्य सूशीव हैं तथा रघुवंश में अवतीर्ण हुये करुणामय श्रीरामजी को सादर नमन करता हूँ ॥३०॥

आदित्यरविमिति आदित्यस्य प्रकाशस्यापि रविं प्रकांशकम् उपलक्षणमिदं चन्द्रादेः । श्रुतिश्च 'न तत्र सूर्योभाति न चन्द्रतारके नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽय मग्निः । तमेव भान्तमनुभाति सर्वं यस्य भासा सर्वमिदं विभाति' इति । घृणिं द्युतिरूपं येन द्युतिमतां सूर्यादीनां द्युतिमत्वं 'किरणोऽस्त्रमयूखांशुगभस्तिघृणिरश्मयः' इत्यमरः । सूर्यं विभूतिकं ज्योतिषां रविरंशुमानित्युक्तेः । अनामयं न आमयो अविद्या रागो यतस्तं अविद्यानिवारकमित्यर्थः । आनन्दरूपिणं सूखात्मकविग्रहन्तं सौम्यं सुशीलं यदुक्तं 'स्मितपूर्वाभिभाषी च धर्मं सर्वात्मना श्रितः' इति करुणामयं कृपामयमूर्तिं कृपैव रामरूपेण आविरभूदितिभावः । यदुक्तं 'व्यसनेषु मनुष्याणां भृशं भवति दुःखितः । उत्सवेषु च सर्वेषु पितेव परितुष्यति' इति । निर्निमित्तपरदुःख प्रहाणेच्छाखलु करुणेत्युच्यते ॥३०॥

जामदग्नितपोमूर्तिं रामं परशुधारिणम् ।
वाक्पतिं वरदं वाच्यं श्रीपतिं पक्षिवाहनम् ॥३१॥

जो जमदग्निरूप तपस्या के मूर्तिस्वरूप सर्वदा परशु को धारण करनेवाले परशुरामरूप श्रीरामजी हैं एवं वाणी सरस्वती के पति हैं तथा साधकों को इच्छित वरदान देनेवाले हैं, और वाच्य यानी वेद उपनिषद् धर्म इतिहास प्रभृति सभी शास्त्रों के एकमात्र लक्ष्यभूत तत्त्व या प्रकाशक हैं, तथा श्रीपद से कथित श्रीसीताजी या लक्ष्मीजी के पति हैं, और पक्षि गरुज या पुष्पक वाहन वाले हैं ऐसे सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी को सतत प्रणाम है ॥३१॥

अथावेशावताररूपं प्रणमति जन्मदग्नीत्यर्धेन जमदग्नेर्यत्तपः सैव मूर्तिर्यस्य

तं रामं परशुनामं सतः यच्छक्त्यावेशात्परशुरामस्य भगवत्वं वह्न्याविष्टस्यायः पिण्ड स्य वह्नित्ववत् मन्यन्ते । आकृष्टायां तु शक्तौ तस्य ब्रह्मर्षित्वमेवावशिष्टं परमव्योमाधि पतिरूपं प्रणमति वाक्यमित्येके वाक्पतिं सरस्वतीनायकं वरदं अभिष्टपूरकं वाच्यम् वेदेनाभिधेयं 'राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः । राम एव परं तत्वं श्रीरामो ब्रह्मतारकम्' रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि । इति रामपदेनासौ परब्रह्मा भिधीयते' नारायणं महाज्ञेयमित्यादिश्रुतेः । यद् वाचानभ्युदित इत्यादिकं तु कार्त्स्न्ये नावाच्यतां गमयति । इतरथा औपनिषदः पुरुष इत्यादिश्रुतिव्याकोपापत्तिः । यतः कार्त्स्न्येन वक्तुं न शक्यते अतस्तदवाच्यमिति व्यवह्यते । नतदीदृगिति ज्ञेय न वाच्यं न च तर्क्यते । पश्यन्तोऽपि न पश्यन्ति मोहरूपं विपश्चितः' इति स्मृतेः । श्रीपतिं श्री सीतापतिम् लक्ष्मीनायकमिति वा पक्षिवाहनं गरुडवाहनम् ॥३१॥

श्रीशार्ङ्गधारिणं रामं चिन्मयानन्दविग्रहम् ।
हलधृग्विष्णुमीशानं बलरामं कृपानिधिम् ॥३२॥

जो श्रीरामजी शार्ङ्ग नामक धनुष को धारण करनेवाले हैं एवं श्रीदशरथ पुत्ररूप में अवतीर्ण होकर श्रीराम इसी नाम से प्रसिद्ध हैं, तथा चिन्मय एवं आनन्दमय विग्रह वाले हैं और हल को शस्त्र के रूपमें धारण करने वाले हैं, तथा सर्वव्यापक हैं एवं सवों के ईश्वर हैं और कृपा के सागर हैं तथा अत्यन्त बलवाले हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को सादर प्रणिपात करता हूँ ॥३२॥

श्रीशार्ङ्गेति-**शोभमानशार्ङ्गं कार्मुकमित्यर्थः । चिन्मयेति स्वप्रकाशसुखधन मूर्तिमित्यर्थः संकर्षणरूपत्वमाह हलधृगिति द्वीतीयार्थे प्रथमा ॥३२॥**

श्रीवल्लभं कृपानाथं जगन्मोहनमच्युतम् ।
मत्स्यकूर्मवराहादिरूपधारिणमव्ययम् ॥३३॥

जो श्रीसीतजी के वल्लभ प्रिय पति हैं एवं कृपानाथ यानी अतिदयावाले हैं और मोहिनी रूप या बुद्ध आदि रूपों को धारण कर जगत को मोहित करनेवाले या अति कमनीय विग्रह होनेसे श्रीरामरूप से संसार को मोहित करनेवाले तथा अच्युत यानी धर्म रक्षण या शरणापन्न जीवों के रक्षण कार्यों में कभी भी च्युत न होनेवाले एवं **'सर्वेषाम वताराणामवतारी रघूत्तमः'** इस आगम वचनानुसार मत्स्य कूर्म बराह नरसिंह प्रभृति अनेक रूपों को धारण करनेवाले हैं तथापि कभी विकार को प्राप्त न होनेवाले अव्ययरूप

श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम करता हूँ ॥३३॥

कारणार्णवशय्यादिरूपत्वमाह श्रीवल्लभमित्यर्धेन । श्रीवल्लभं श्रियास्वानन्यरूपायाः श्रीसीतायावल्लभं 'अनन्या च मया सीता' इतिमहर्ष्युक्तेः । श्रीवल्लभमित्युक्ते सहिनित्यलक्ष्मीवानिति प्रतीयते । कृपानाथं करुणावन्तं स खलु परमदयालुः स्वस्मिन् विलीनानामनुशायिनामभ्युदयादिप्रापणाय विलयान्ते प्रकृतिं प्रेक्ष्य ततो महरादिमुत्पाद्य तेनाण्डं जनयित्वा तद् गर्भोदके शयानोऽण्डमन्तर्नियमयति क्षीराम्बुधौ च शयानस्तत्परिपालयतीति श्रीराम एव तत्तदात्मको भवतीति ज्ञेयम्। जगन्मोहनं तत्रैव विमुखान् मायया मोहयन्तम् अच्युतमेतादृशेऽपि व्यापारे सति अप्रच्युतसामर्थ्यमित्यर्थः । अथ विभवापरपर्य्यायलीलावताररूपं प्रणमति मत्स्येत्यर्धेन । अव्ययमिति नहि पूर्वरूपोपमर्देन रूपान्तरस्वीकारः ताद्रूप्येणस्थित एव तस्मिन् रूपान्तराविर्भावात् । एतदुक्तं भवति श्रीरामचन्द्रो भगवान् मूलतत्वं देवादिभक्तकार्यवशात् स्वयमाविर्भवति स्वस्मिन्नेव कदाचिन्मत्स्यादिरूपाणि च प्रत्यापयति वैदूर्यमणिरिव रूपान्तराणि नहि तस्मादन्यन्मत्स्यादि 'यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः मत्स्यकूर्माद्यवताराः भूर्भुवः स्वः तस्मै वै नमो नमः' इतिश्रीरामतापनीयवाक्यात् 'सर्वेषामवताराणामवतारीरघूत्तमः' इस्याद्यागमोक्तेः-

'परिपूर्णतमं ब्रह्मकलेशः क्लेशवर्जितः ।
अंशीसर्वावतारी च सर्वेशः श्रुतिदर्शितः
वासुदेवादिमूर्त्तीनां चतुर्णां कारणं परम् ।
चतुर्विंशतिमूर्त्तीनामाश्रयः शरणं मम'

इत्यादिरूपेणाचार्यपरमाचार्यवर्यैः प्रतिपादितत्वाच्च । सर्वाणि च रूपाणि सनातनानि सर्वगुणवन्तीति मन्तव्यम् । सर्वे नित्याः शाश्वताश्च देहास्तस्य परात्मनः । हानोपादानरहिता नैव प्रकृतिजाः क्वचित् । परमानन्दसंदोहा ज्ञानमात्राश्च सर्वतः । सर्वे सर्वगुणैः पूर्णाः सर्वदोषविर्वजिता' इति महावाराहवाक्यात् । न च पूर्वपश्चाद्भावेनानित्यत्वं क्वचिच्छक्यमेकस्मिन्नेव वस्तुनि श्रीरामे वैदूर्यमणाविवमत्स्यादिरूपाणां यौगपद्य सिद्धिसत्वात् । स्मृतिश्चैवमाह-

'मणिर्यथा विभागेन नीलपीतादिभिर्युतः ।
रूपभेदमवाप्नोति ध्यानभेदात्तथाच्युतः' इति ।

मणिरत्नं वैडूर्यं किञ्च यद्यपि सर्वगुणकृता सर्वत्र पूर्तिरविशेषा तथापि यत्र

लोकैस्ते सर्वे गुणा प्रतीयन्ते तान्पूर्णान् वदन्ति तथा नृसिंहरामकृष्णान् यदुक्तं-नृसिंह रामकृष्णोषु षाड्गुण्यं परिपूरितमिति । यत्र ते स्वरूपे सन्तोऽपि कार्याभावान्ना विर्भवन्ति । ततो लोकैर्न प्रतीयन्ते । तास्तु कला अंशाश्चेतिद्विधा तथा व्यासादीन् मत्स्यादींश्च यथैक एव सर्वशास्त्रवित् क्वचित् सर्वशास्त्रोद्ग्राही सर्वज्ञः कथ्यते क्वचित्तु स एव द्वयेकशास्त्रोद्ग्राहीज्ञ उच्यते सर्वशास्त्रैकदेशोद्ग्राही च सर्वज्ञसदृश इति तथा तद् द्रष्टव्यम् ॥३३॥

वासुदेवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् ।

गोविन्दं गोपतिं विष्णुं गोपीजनमनोहरम् ॥३४॥

जो वासुदेव यानी सब जगह वास करनेवाले हैं एवं जगत् के योनि कारण हैं तथा उत्पत्ति एवं विनाश से रहित हैं और हरि अर्थात् अपने से उत्पन्न संसार को अपने में ही संहार करनेवाले हैं तथा गोविन्द यानी इन्द्रियगण को नियन्त्रण करनेवाले या वेदादि शास्त्रों से जाने जानेवाले हैं तथैव गोपति वेदों के रक्षक या इन्द्रियों के स्वामी हैं और सर्वव्यापक एवं गोपिजनों के मन को हरण करनेवाले ऐसे सर्व मनोहरी श्रीरामजी को नमस्कार करता हूँ ॥३४॥

पूर्णरूपत्वं विज्ञापयन् श्रीरामं विशिनष्टि वासुदेवमित्यर्धेन । वसति सर्वत्रेति वासुः उण् प्रत्ययः । दीव्यतीति देवः श्रीसाकेतवैकुण्ठादिषु नानाविधेषु दिव्येषु धामसु नित्यं निवसन् क्रीडति दीव्यते च यस्तमित्यर्थः ।

जगद्योनिं विश्वस्य कराणं चिदचिद्वस्तुशरीरकात् श्रीरामादेव जगदुत्पत्तेस्तथा च श्रीरामतापिन्यां श्रूयते-

यथैव बटबीजस्थः प्राकृतश्च महाद्रुमः ।

तथैव रामबीजस्थं जगदेतच्चराचरम् ।

इति अनादिनिधनं नित्यत्वादुत्पत्तिविनाशशून्यं सत्त्वे सत्यकारणत्वं हि नित्यत्वं हरिं स्वस्मादुत्पन्नस्य प्रधानादिप्रपञ्चस्य स्वस्मिन्नेन संहारकम् । सर्वावता रित्वात् श्रीरामं गोपलीलया विशिष्टं प्रणमति गोविन्दमित्यादिना सार्धद्वयेन गोविन्दं गोपालरूपेण गोषु क्रीडन्तमित्यर्थः । गोपतिं गवां स्वामिनं विष्णुं व्यापकं पद्मादीनां गोपकिशोरीणां सौन्दर्यस्मितेक्षणतृष्णया तासां गृहान् युगपत् प्रविशन्तमित्यर्थः । गोपीजनानां पद्मादीनां मनांसि हरन्तम् सौन्दर्यस्मितेक्षणनर्मालापादिभिः स्वासक्तानि

कुर्वन्तमित्यर्थः ॥३४॥

गोपालं गोपरिवारं गोपकन्या समावृतम् ।
विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशं रामं कृष्णं जगन्मयम् ॥३५॥

जो गौपालन करनेवाले एवं गो परिवारवाले हैं तथा गोप कन्याओं से अच्छी तरह से सेवित हैं और विजली के समुह के समान कान्तिवाले हैं तथा कृष्ण यानी इन्द्रलीलमणि के समान श्याम प्रभावाले और चराचर संसारमय यानी संसार को उत्पन्न पालन एवं संहार करनेवाले सर्वेश्वर श्रीरामजी को सादर प्रणाम करता हूँ ॥३५॥

गोपालं मृदुलतृणपल्पवपर्णादिना गवां तोषकं गोपरिवारं गावः परिवारः यस्य तं गोप्रियमित्यर्थः । अथ दानलीलां सूचयन्नाह गोपकन्येति । एतदुक्तं भवति रक्षोविनाशफलके शत्रे नारदादिप्रेरणया दशरथेन प्रवर्तिते श्रीनारदोपदिष्टश्रीराम प्रीतिफलकं हविरर्पणं कर्तुं तत्र सश्रद्धं प्रयान्तिभिः पद्मादिभिः सह दत्तयूपमस्य हविः कलशचयस्यानर्ध्यं भूषगणस्यास्यदेवाङ्गनास्वप्यश्रुतचरस्य प्रत्येकयौवनभार स्य च परार्धसंख्या निषण्णानीति कलहायते ताभिश्चान्तः परितुष्टाभिरपि वहिः परुषवचनादिभिः कोपव्याजेनोत्तमितभ्रूलताभिस्तद्वेण्या कर्षणाय तत्सुखस्पर्शाय च समावृत्तो 'भवति । तं श्रीराममिति विद्युत् पुञ्जप्रतीकाशं शशीभूतसौदामनीतुल्या कान्तिमन्तमित्यर्थः । यथा कान्त्या श्यामलोऽपि दिशोवितिमिराः करोति । जानकी कान्तिसंक्रमाद् गौरमिति वा रामं कृष्णमिति व्याख्यातं प्राक् ॥३५॥

गोगोपिकासमाकीर्णं वेणुवादनतत्परम् ।
कामरूपं कलावन्तं कामिनीकामदं विभुम् ॥३६॥

जो गौ एवं गोपवालाओं से संवेष्टित हैं तथा वेणु वजाने में तत्पर एवं कामरूप तथा अनेक कलावाले और कामिनीयों के कामनाओं को पूर्ण करनेवाले सर्वव्यापक श्रीरामचन्द्रजी को सन्नति है ॥३६॥

गोभिर्गोपिकाभिश्च दोहनव्याजेनद्रष्टुमागताभिर्वेष्टितः । वेणुपादनतत्परश्च । कामरूपं मायया कृतकन्दर्पकलावन्तं गोगोपीतोषकनृत्यगीतादिवैदग्ध्यविशिष्टं कामिनीनां तदाश्लेषादिकामिनीनां तासां गोपीनां तदादिदानेनाभिलाषान्पूरयन्तं विभुं प्रतिगोपीगृहाविर्भाविनम् ॥३६॥

मन्मथं मथुरानाथं माधवं मकरध्वजम् ।

श्रीधरं श्रीकरं श्रीशं श्रीनिवासं परात्परम् ॥३७॥

जो अपनी चितवन से मन को क्षुब्ध करनेवाले हैं एवं मथुरा का पालन करनेवाले हैं और माधव-लक्ष्मीपति हैं तथा मकरध्वज यानी कन्दर्प स्वरूप और श्रीसीताजी को धारण करनेवाले अर्थात् **'अनन्या च मया सीता भास्करेण यथा प्रभा'** इस श्रीमद्रामायण वचनानुसार श्रीसीताजी को सतत हृदय में धारण कनरेवाले एवं श्रीधर यानी ऐश्वर्य का प्रशासक या प्रदायक हैं तथा श्रीश श्रीसीताजी के ईश स्वामी एवं श्रीनिवास श्रीसीताजी के निवास स्थान अथवा साधकों के इच्छानुसार श्रीसीताजी के साथ निवास करनेवाले परात्पर ब्रह्मादि देवताओं के उपास्य परब्रह्म श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम करता हूँ ॥३७॥

मन्थमिति-स्मितवीक्षणादिना तासां मनांसि क्षोभयन्तमित्यर्थः । सहस्रनाम्नि मथुरानाथं मधुपुर्य्याः स्वामिनं शत्रुघ्नं द्वारपालायन्तमित्यर्थः । माधवं पद्मायाः पतिं श्रीधरं मकरध्वजं कन्दर्पस्वरूपम् । रेखारूपया श्रिया चिह्नितवक्षसं श्रीकरं महाराजोचितबहुविभूतिप्रकाशकं श्रीशं तत्तद्विभूतिनियामकं श्रीनिवासं स्थिरसत्तद्विभूतिकमित्यर्थः । 'परान्नारायाच्चैव कृष्णात्परतरादपि । यो वै परतमः श्रीमान् रामोदाशरथिस्वराट्' इत्यागमोक्तेः परात्परं सर्वेश्वरं श्रीराममितियावत् । अवतारकाले सर्वनृपसंवन्दितपादपीठत्वेन संस्तूयमानमिति वा ॥३७॥

भूतेशं भूपतिं भद्रं विभूतिं भूतिभूषणम् ।
सर्वदुःखहरं वीरं दुष्टदानववैरिणम् ॥३८॥

जो भूत प्राणिवर्ग के स्वामी हैं एवं भूभार को हरण कर उसका भरण-पोषण करनेवाले हैं तथैव भद्र मङ्गलरूप है और विभूति यानी अणिमादिकों द्वारा सेवित हैं और सभी ऐश्वर्यों के भूषणरूप तथा सभी प्रकार के दुःखों का अपहरण करनेवाले हैं यानी **'सर्वावताररूपेण दर्शनस्पर्शनादिभिः । दीनानुद्धरते यस्तु स रामः शरणं मम'** इस आगम वचनानुसार सभी अवतारों के कारण स्वरूप से दर्शन एवं स्पर्शन आदि से शरणापन्न दीनजनों का उद्धार करनेवाले शरणागतवत्सल हैं उन्हीं श्रीरामजी की शरणागति स्वीकारना चाहिये भवसागर तरने की इच्छावालों को ऐसा इसाका तात्पर्य है। वीर प्रदीप्त तेजवाले एवं दुष्ट दानवों को नाश करनेवाले वैरि के रूपमे प्रसिद्ध हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को सादर प्रणाम करता हूँ ॥३८॥

भूतेशमिति सर्वप्राणिप्रभुमित्यर्थः । भूपतिरक्षः कृतक्लेशतो भुवस्त्रातारं भद्रं मङ्गलात्मकं विभूतिं विशिष्टा भूतयो यस्य तं अणिमादिसिद्धिसेवितमित्यर्थः । भूतिभूषणं भूतीनां भूषणं यदनुग्रहात्तासां विभूतित्वमितिभावः । स्फुटमन्यत् ॥३८॥

श्रीनृसिंहं महाबाहुं महान्तं दीप्ततेजसम् ।
चिदानन्दमयं नित्यं प्रणवं ज्योतिरूपिणम् ॥३९॥

जो नृसिंहरूप धारण करनेवाले या नरों में सिंहरूप हैं एवं महान् बाहुवाले तथा श्रेष्ठ या पूजनीय हैं और प्रदीप्त प्रकृष्ट तेजवाले हैं तथा चिदानन्द स्वप्रकाश एवं आनन्दमय हैं और नित्य यानी सर्वदा एक रस रहनेवाले उत्पत्ति तथा विनाश रहित हैं तथा ओंकार स्वरूप हैं एवं 'सूर्यस्यापि भवेत्सूर्यो ह्यग्नेरग्निः प्रभोः प्रभुः' इस श्रीमद्रामायण के वचनानुसार सूर्यादिकों का भी प्रकाशक सर्वज्योति स्वरूप हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम करता हूँ ॥३९॥

श्रीनृसिंहमिति श्रीयुक्तं पुरुषसिंहमित्यर्थः । महाबाहुमाजानुलम्बमानभुजं न्यग्रोधमण्डलत्वलक्षणलक्षितमित्यर्थः । महान्तं स्ववर्गमुख्यं दीप्ततेजसं दुर्धर्षप्रतापं चिदानन्दमयं प्रचुरज्ञानसुखवपुषं प्राचुर्ये मयट् न चात्र दुःखांशसद्भावः । प्रकृत्यर्थभूम्नस्त्वेन विलक्षणात् दुःखांशस्तु तत्र नैवास्ति 'एष आत्मापहतपाप्मा' परः पराणां सकलानयत्र क्लेशादयः सन्ति परावरेशे' इत्यादिश्रुतिस्मृतिभ्यः प्रणवमोंकाररूपं ज्योतीरूपिणमादित्यादिप्रकाशकं ह्रस्वत्वमार्षम् ॥३९॥

आदित्यमण्डलगतं निश्चितार्थस्वरूपिणम् ।
भक्तप्रियं पद्मनेत्रं भक्तानामीप्सितप्रदम् ॥४०॥

जो आदित्य मण्डल में विराजमान हैं एवं निश्चित वेदादि शास्त्र सिद्धान्त स्वरूप से नियत किये गये स्वरूपवाले हैं तथा भक्तों के प्रिय हैं और कमल के समान नेत्रवाले हैं एवं साधक भक्तों के इच्छित पदार्थों को प्रदान करनेवाले हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को सादर प्रणाम करता हूँ ॥४०॥

आदित्येति व्याख्यातं प्राक् । निश्चितेति निश्चितं मनोमयः प्राणशरीरो भारूपः सत्यसङ्कल्पः आकाशात्मा सर्वकर्मा सर्वकामः, सर्वगन्धः, सर्वरसः सर्वमिदमभ्यात्तो वाक्यनादरः' इतिछान्दोग्यश्रुतिसिद्धमर्थस्वरूपं परमार्थभूतं भोग्यभोगोपकरणभोगस्थानं तदस्यास्तीति तं प्राशस्त्ये नित्ययोगे वा मतुप् स्फूटमन्यत् ॥४०॥

कौसलेयं कलामूर्तिं काकुत्स्थं कमलाप्रियम् ।
सिंहासने समासीनं नित्यव्रतमकल्मषम् ॥४१॥

जो अयोध्या के अधिपति हैं एवं समस्त कलाओं के मूर्ति हैं और ककुत्स्थ वंश में प्रादुर्भूत तथा कमला के प्रिय हैं एवं दिव्य रत्नसिंहासन में विराजमान हैं और धर्माचरण परायणों में सदा सावधान रहनेवाले हैं तथा दम्भप्रभृति पापादि दोषों से रहित हैं ऐसे श्रीरामजी को प्रणाम करता हूँ ॥४१॥

कौसलेयमिति **कौसलाया अयोध्याया अधीश्वरमित्यर्थः । कलाश्चतुःषष्टिस्ता मूर्तिर्यस्य तं तास्वतिप्रवीणमित्यर्थः । काकुत्स्थं ककुत्स्थवंशभवं नित्यव्रतमवाधि तधर्माचारनियममतोऽकल्मषं निर्दोषं पञ्चमी बहुव्रीहिः स्मृतिमात्रेण कीर्तनेन च दुरित निवर्त्तकमित्यर्थः ॥४१॥**

विश्वामित्रप्रियं दान्तं स्वदारनियतव्रतम् ।
यज्ञेशं यज्ञपुरुषं यज्ञपालनतत्परम् ॥४२॥

जो श्रीविश्वामित्रजी के प्रिय हैं एवं जितेन्द्रिय हैं और अपनी भार्या श्रीसीताजी में ही नियत रूपसे भोगादिव्रत निष्ठावाले यानी स्वपरिणिता श्रीसीतातिरिक्त स्त्री के साथ विलास नहीं करनेवाले एक पत्निव्रतवाले हैं तथा यज्ञ के स्वामी एवं यज्ञपुरुष यानी यज्ञों से समाराधीन हैं और यज्ञों के पालन में तत्पर हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को नमन करता हूँ ॥४२॥

वीश्वामित्रप्रियमिति **तत्पुरुषो बहुव्रीहिर्वा स्वदारेति स्वस्त्रीष्वेव नियतो नित्यभोगनिष्ठा यस्य तं श्रीरामं यज्ञेशं यज्ञे पूज्यं यज्ञपुरुषं यज्ञात्मकं पुरुषम् । यज्ञपालने यज्ञनाशकदुष्टेभ्यः संरक्षणे तत्परम् ॥४२॥**

सत्यसन्धं जितक्रोधं शरणागतवत्सलम् ।
सर्वक्लेशापहरणं विभीषणवरप्रदम् ॥४३॥

जो सत्यप्रतिज्ञावाले हैं एवं क्रोध को जितनेवाले हैं तथा शरण में आये सभी प्राणियों को वात्सल्यभाव से संरक्षण प्रदान करनेवाले हैं और अविद्या अस्मिता राग द्वेष अभिनिवेशरूप सभी क्लेशों का अपहरण नाश करनेवाले हैं तथा विभीषणजी को सर्वाभयप्रद वरदान देनेवाले श्रीरामजी को सादर प्रणाम है ॥४३॥

सत्येति अखण्डितप्रतिज्ञमित्यर्थः । यदुक्तं स्वयमेव

तद्देवि ? वचनं ब्रूहि राज्ञो यदभिकांक्षितम् ।
करिष्ये प्रतिजाने च रामो द्विर्नाभिभाषते ॥ इति ॥

अप्यहं जीवितं जह्यां त्वां वा सीते सलक्ष्मणम् ।
नहि प्रतिज्ञां संश्रुत्य ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः ॥

इति च जितक्रोधमिति । प्रसह्य क्रोधो नास्ति स्वनिदेशातिवर्तिन्यविनीते तु तस्या तिक्रोधोस्यादेव यथाभ्यर्थनयापि मार्गमदातरि समुद्रे । शरणेति यदाह स्वयमेव

'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतत् व्रतं मम ॥ इति ॥

तद् वात्सल्यस्थानमुदाहरणं विशिनष्टि विभीषणेति यदाह स्वयमेव

अहं हत्वा दशग्रीवं सप्रहस्तं सहात्मजम् ।
राजानं त्वां करिष्यामि सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥

रसातलं वा प्रविशेत् पातालं वापि रावणः ।
पितामहशकाशं वा न मे जीवन् विमोक्षते ॥

अहत्वा रावणं संख्ये सपुत्रजनबान्धवम् ।
अयोध्यां न प्रवेक्षामि त्रिभिस्तैर्भ्रातृभिः शपे ॥'

इति स्फुटमन्यत् ॥४३॥

दशग्रीवहरं रुद्रं केशवं केशिमर्दनम् ।
वालिप्रमथनं वीरं सुग्रीवेप्सितराज्यदम् ॥४४॥

जो दशमस्तकवाले रावण का वध करनेवाले हैं एवं रुद्रस्वरूप हैं तथा ब्रह्मा विष्णु एवं शिवजी को सृष्टि पालन तथा संहार कार्यों के लिये शक्ति प्रदान करनेवाले हैं और केशिदैत्य का वध करनेवाले हैं एवं वालि का वध करनेवाले वीर हैं तथा सुग्रीव से अभिलषित राज्य को प्रदान करनेवाले हैं ऐसे श्रीराघवेन्द्रजी को सादर प्रणाम करता हूँ ॥४४॥

दशेति रावणशिरच्छेत्तारमित्यर्थः । रुद्रंतच्छिरच्छेदकाले क्रोधाविष्टमित्यर्थः केशवं प्रशस्तंकुन्तलवन्तं केशिमर्दनं रामगोपाललीलायां केशिसंज्ञासुरनाशकं स्फुट

मेतदादिरामायणादौ ॥४४॥

नरवानरदेवैश्च सेवितं हनुमत्प्रियम् ।
शुद्धं सूक्ष्मं परंशान्तं तारकं ब्रह्मरूपिणम् ॥४५॥

जो श्रीरामजी मनुष्य वन्दर एवं देवताओं से सदा सेवित हैं एवं श्रीहनुमानजी के अतिप्रिय हैं तथा प्रकृति के गुणों से रहित शुद्ध स्वरूप एवं सुक्ष्म यानी सामान्यतया दुर्वोध हैं तथा परम शान्त स्वरूप यानी आनन्दरूप हैं और तारक अर्थात् साधकों को सायुज्य मुक्ति प्रदान करनेवाले ब्रह्मरूप हैं । ऐसे श्रीरघुवरजी को प्रणाम है ॥४५॥

नरवानरेति **शुद्धं प्रकृतिलेपरहितं सूक्ष्मं दुर्वोधं परं सर्वेभ्यः श्रेष्ठं तारकं मुक्तिपदं ब्रह्मरूपिणं ब्रह्मात्मकं बृहद्गुणयोगिरूपं विद्यते यस्य तमिति । नित्ययोगेमतुबर्थः । भगवद् विग्रहः खल्वपृथक् सिद्धविशेषणं भवति श्रीरामतापन्यामर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रह इत्युक्तम् । विग्रहस्य बृहद्गुणयोगाद् । ब्रह्मशब्द वाच्यत्वं तु अथ कस्मादुच्यते ब्रह्मेति बृहतोह्यस्मिन् गुणा इति श्रौतनिर्वचनात् । अन्यत् स्फुटार्थः ॥४५॥**

सर्वभूतात्मभूतस्थं सर्वाधारं सनातनम् ।
सर्वकारणकर्तारं निदानं प्रकृतेः परम् ॥४६॥

जो पृथिवी आकाश आदि सभी भूतवर्ग के आत्मा के रूपमें रहनेवाले हैं एवं सम्पूर्ण चराचर वस्तु के आधार तथा सनातन यानी सर्वदा एकरूप से रहनेवाले हैं और सभी के कारणभूत प्रधानादि के कर्ता एवं आदि कारण हैं तथा प्रकृति से पर हैं ऐसे श्रीरामजी को नमस्कार करता हूँ ॥४६॥

सर्वभूतेति **सर्वेषां वियदादीनां भूतानामात्मभूतश्चासावात्मस्थश्चेति तं भूतोपादानत्वात् जीवान्तर्यामित्वाच्च सर्वाधारं सर्वेषां चिदचिद् वस्तुनामाश्रयं 'तस्मिन्नेवाश्रिताः सर्वे तदुनात्येति कश्चनेति श्रवणात् सनातनं तदात्मना नित्यं सर्वेषां कारणादीनां प्रधानादीनां कर्त्तारं तेषां परिणामे निमित्तं निदानं आदिकारणं नमः शब्दित सूक्ष्मशक्तिशरीरकात् श्रीरामादेवप्रधानोत्पत्तिश्रवणात् प्रधानात् पुनर्महदादिद्वारा विश्वोत्पत्तिः । तदाहुः 'किं तदासीत् तस्मै स होवाच सन्नासन्न सदसदिति तस्मात्तमः संजायत' इत्यादिसुबालश्रुतेः । इत्थमेव भगवान् बादरायणो निर्णिनाय 'ज्योतिरूपक्रमात्तु तथा ह्यधीयत एके' इति । प्रकृतेः परं प्रकृतिलेपरहितविशेष्यकमित्यर्थः ।**

'आदित्यवर्णं तमसः परस्तादिति पुरुषसूक्तम् ॥४६॥

निरामयं निराभासं निरवद्यं निरञ्जनम् ।
नित्यानन्दं निराकारमद्वैतं तमसः परम् ॥४७॥

सर्वेश श्रीरामजी जन्म एवं मृत्युरूप महारोग को निवारण करनेवाले हैं एवं निराभास यानी प्रतिबिम्ब के भास से रहित हैं और सभी प्रकार के रोगों से रहित हैं तथा अज्ञान से रहित हैं एवं नित्य आनन्द गुणों से युक्त हैं और निराकार यानी प्राकृतिक आकारों से रहित तथा दिव्य मङ्गलरूपवाले हैं एवं अद्वैत यानी अपने समान दूसरों से रहित या चिदचिद् रूपसे विशिष्ट युक्त होने से कारण एवं कार्य रूपापन्नतया अवस्थित और तम प्रधानादि से पर यानी प्रधान वर्गों के कारण होते हुये भी उनके गुण दोषों से सर्वथा पर अस्पृष्टतया रहनेवाले श्रीरघुराजजी को अनेकश सादर नमस्कार है ॥४७॥

निरामयमिति । पञ्चम्यन्तपदार्थस्य बहुव्रीहेराश्रयणादामयं संसाररोगं निवारयति यस्तथाभूतमित्यर्थः । निर्गत आमयो यस्मात् तमिति विग्रहः । निराभासम् आभासः प्रतिबिम्बस्तस्मान्निर्गतं प्रतिबिम्बभारहितमित्यर्थः । जलादावाकाशमिव मायोपाधौ प्रतिबिम्बितं चिन्मात्रं सर्वेश्वरपदवाच्यं सर्वोपादाननिमित्तं स्यादित्यज्ञाः कल्पयन्ति । तदनेन निरस्तं नहि व्यापकस्य निरूपस्य प्रतिबिम्बं संभवति । निरवद्यं निर्दोषं यतो निरञ्जनं प्रकृतिलेपरहितं नित्यानन्दम् अपृथक् सिद्धानन्दादिगुणगणमित्यर्थः । निराकारं प्राकृताकारान्निर्गतं स्वरूपं यस्य व्यापकत्वेन चतुर्भुजाद्याकारान्निर्गतमिति वा आकार इह विराट् रूपमुच्यते । तस्माद् वैलक्षण्यं किल ततो निर्गतिः । अद्वैतं चिदचिद् विशिष्टस्वरूपत्वात् तमसः परं विशेष्येण स्वरूपेण नित्यविभूतिस्थम् ॥४७॥

परात्परतरं तत्त्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
मनसा शिरसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ॥४८॥

जो श्रीरामजी पर शब्द से कथित संसार के कारण प्रधानादि से पर एवं नित्यमुक्त जीव समूहों से भी अतिशय पर रूपसे स्थित धर्म काम एवं मोक्षरूप परम पुरुषार्थ प्रदाता परतत्त्वरूप हैं और सत्य एवं आनन्द स्वरूप-सर्वदा एक रूपवाले हैं तथा चिदचिदात्मक यानी सभी के प्रकाशक स्वयं प्रकाश्य स्वरूपवाले हैं ऐसे सर्वमय रघुकुल शिरोमणि सर्वेश्वर श्रीरामजी को मनसे एवं शिरसे यानी कायिक वाचिक तथा मानसिक

रूपसे नित्य प्रणाम करता हूँ ॥४८॥

परात्परतरमिति **प्रधानादिकारणत्वात्तमस्तत्वं परमुच्यते तस्मात्परं नित्यमुक्त जीववृन्दं तदतिक्रमणात् तस्मादपि परं तस्याप्युपास्यं श्रीरामतत्त्वं परमपुरुषार्थ भूतमिति पूर्वत्रहेतुस्तदेवाह सत्यानन्दं चिदात्मकमिति सत्यस्त्रिकालसिद्धो न तु विष यनिषेवया कदाचिदुपजात आनन्दो यस्य तं चिदात्मकं स्वस्मै स्वयं प्रकाशमानस्वरू पमिति परमपुरुषार्थत्वं व्यक्तम्** । ईदृशं रघूत्तमं मनसा वचसा नित्यं प्रणमसि ॥४८॥

सूर्यमण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम् ।

नमामि पुण्डरीकाक्षममेयं गुरुतत्परम् ॥४९॥

जो सूर्यमण्डल के मध्य में अपने से अभिन्न स्वरूपा सर्वेश्वरी श्रीसीताजी के साथ विराजमान हैं एवं कमल के समान उज्ज्वल कर्ण पर्यन्त दीर्घ नेत्रवाले है और अमेय यानी देश काल एवं वस्तु रूप तीन प्रकार के परिच्छेद रहित हैं या सामान्य ज्ञान के अविषय हैं तथा गुरुतत्पर हैं अर्थात् श्रीवशिष्ठ प्रभृति गुरुजनों के आज्ञा पालन में सदा तत्पर रहते हैं ऐसे सर्वेश श्रीरामजी को सादर नमस्कार करता हूँ ॥४९॥

सूर्यमण्डलेति **पूर्ववत्सीतया श्रीजानकीदेव्या सम्यक् नित्यमनुनिरन्तरमितं युक्तं पुण्डरीकाक्षं प्रसन्नोज्ज्वलाकर्णायतनेत्रम् अमेयमपरिछेद्यस्वरूपगुणलील मित्यर्थः । गुरुतत्परं वशिष्ठादिपूज्यवर्गभक्तिपरायणम् ईदृशं रामं नमामीति युग्मोपासनं व्यञ्जितम्** ॥४९॥

नमोऽस्तु वासुदेवाय ज्योतिषां पतये नमः ।

नमोऽस्तु रामदेवाय जगदानन्दरूपिणे ॥५०॥

जो समस्त भूतवर्ग में निवास करनेवाले एवं सूर्यादिकों को नियन्त्रित करने यानी प्रकाशित करनेवाले हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को नमस्कार है । तथा जगत् को सर्वदा आनन्द प्रदान करनेवाले और अपने अनन्त गुणों एवं रूप तथा उदारता के कारण सभी के चित्त में सदा रमण करनेवाले सृष्टि स्थिति एवं संहार के मूल कारण श्रीरामचनद्रजी को सादर नमस्कार है ॥५०॥

नमोस्त्विति **वासुदेवायेति पूर्ववत् ज्योतिषां पतये सूर्यादीनां नियन्त्रे राम देवाय रामोभक्तचित्तरमणस्थानभूतः देवः सर्वाराध्यः विचित्रक्रीडापरः स्तवनीयश्च तस्मै जगदानन्दरूपिणे सर्वानन्दहेतवे 'एष एवानन्दयति' इति श्रवणात्** ॥५०॥

नमो वेदान्तनिष्ठाय योगिने ब्रह्मवादिने ।
मायामयनिरस्ताय प्रपन्नजनसेविने ॥५१॥

जो वेदान्त में निष्ठा रखनेवाले या वेद के अन्तभाग से प्रतिपाद्य अथवा वेदान्त से ही जाने जाते हैं एवं योगि यानी चित्तवृत्ति को विषयों से निवृत्त कर आत्मा में रमणशील साधकों से साक्षात् किये जानेवाले तथा छओं अंगों के सहित वेद के उपदेशक या प्रवर्तन करनेवाले और माया एवं मायिक समस्त वस्तुओं से सर्वताभाव से पृथक् या निर्लिप्त रहनेवाले एवं शरणागतजनों द्वारा समाराधनीय हैं ऐसे सर्वेश श्रीरामजी को नमस्कार है ॥५१॥

नमो वेदान्तेति वदान्तेषु निष्ठा प्रतिपाद्यतया स्थितिर्यस्य तस्मै तद् वेद्याये त्यर्थः । 'वेदान्ते च प्रतिष्ठित' इति श्रुतेः । योगिने भक्तमैत्रीरसरसिकायेत्यर्थः । ब्रह्मवादिने साङ्गस्य सशिरस्कस्य ब्रह्मणो वेदस्य प्रवर्त्तकायेत्यर्थः । मायेति निरस्त मायामयाय आहिताग्न्यादिगणपाठान्निष्ठान्यस्य पूर्वप्रयोगानियमः प्रपन्नेति प्रपन्नजनकर्तृका सेवा विद्यते यस्य तस्मै तत्सेवा कांक्षिणे इतिभावः ॥५१॥

वन्दामहे महेशानं चण्डकोदण्डखण्डनम् ।
जानकीहृदयानन्दचन्दनं रघुनन्दनम् ॥५२॥

जो शंकरजी के धनुष को तोडनेवाले हैं एवं परात्पर तत्त्व हैं और श्रीजानकीजी के हृदय को आनन्द एवं चन्दन के समान शीतल प्रदान करनेवाले तथा रघुवंशियों को आनन्द प्रदान करनेवाले हैं ऐसे रघुवंश भूषण श्रीरामचन्द्रजी को सर्वदा वन्दन करता हूँ॥५२॥

वन्दामहेति रघुनन्दनं वयं वन्दामहे अत्रैकवचनस्य बहुवचनं अस्मदो द्वयोश्चेति पाणिनि स्मरणात् । श्रीरामस्तुतिजनितहर्षनिर्भरादात्मनि बहुत्वमननाद् वा तथा कीदृशं चण्डस्य रुद्रस्य कोदण्डं धनुः खण्डयतीति तथा । ननु शिवस्येश्वरस्य धनुस्तेन कथं भक्तं तत्राह महेशानं सर्वेश्वरमनुस्यवेषेणापि तस्येश्वराभिमानिनेति क्रमः परममाधुर्यं पुस्णातीति । अत एव जानकीति जानकीहृदयस्य श्रीरामानुरागिणः किं भावीत्यनिष्टशंकासंतप्तस्य चन्दनं शैत्यकरं येनेदं शिवकार्मुकं भक्तुं शक्यं स एव मत्पुत्र्या वर इति जनकस्य राज्ञः पण आसीत्तस्माच्छंकोत्पत्तिः सुकुमारेण तेनेदं महत्कर्म कथं स्यादिति ॥५२॥

उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलश्यामाय रामाय नः
कामाय प्रमदामनोहरगुणग्रामाय रामात्मने ।
योगारूढमनुनीन्द्रमानससरोहंसाय संसारवि-
ध्वंसाय स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुंसे नमः ॥५३॥

जो उज्ज्वल एवं विकसित कोमल श्याम कमल के सदृश श्याम वर्णवाले हैं और सभी प्रकार के कामनाओं के पूर्ण करनेवाले तथा युवतियों के मन को अपहरण करनेवाले गुणसमूहों से युक्त तथा श्रीजानकीजी में ही दत्तचित्तवाले हैं और योगारूढ यानी श्रीरामजी के ही प्रपत्तियोग में समारूढ-सदा विराजमान मुनिश्रेष्ठ श्रीसनत्कुमार एवं श्रीनारद आदि के मनरूप सरोवर के हंसस्वरूप और संसार को यानी जन्म एवं मृत्यु को सदा के लिये नाश करनेवाले तथा प्रदीप्त तेजवाले एवं रघुकुल के श्रेष्ठभूषण स्वरूप हैं ऐसे परपुरुष श्रीरामजी को हमलोगों का सदा का नमस्कार है यानी जन्म एवं मृत्यु के नाशक परपुरुष श्रीरामचन्द्रजी को हम सादर प्रणाम करते हैं ॥५३॥

अथ रूपादिगुणानुद्दिशन् प्रणमति उत्फुल्लेति **रामाय पुंसे नोऽस्माकं नमः प्रणतिरस्तु कीदृशाय उत्फुल्लं विकसितममलं निर्मलं मृदुलं यदुत्पलदलं नीलनीरजपत्रं तद्विश्यामस्तस्मै कामाय स्पृहणीयाय प्राकृतमन्मथाय वा अतः प्रमदानां प्रेममत्तानां युवतीनां मनोहरो गुणग्रामः स्मितप्रेक्षणनर्मालापक्रीडाकौशलादिर्यस्य तस्मै रामात्मने जानकीसंसक्तचित्ताय । योगारूढं श्रीरामविसयिकप्रेमभक्तियोगयुक्तं यन्मुनीन्द्राणां कुमारनारदादीनां मानसं मनस्तदेव सरः सरोवरं तस्मिन् हंसाय तद्वत् कृत सुखविहारायेत्यर्थः । संसारः स्वभक्त्युन्मुखानां प्राणिनां वासना तस्य विध्वंसाय छेदकाय स्फुरद्दीप्यमानमोजस्तच्छेदने बलं यस्य तस्मै रघुकुलोत्तंसाय शिरोभूषणायेत्यर्थः ॥५३॥**

भवोद्भवं वेदविदोवरिष्ठमादित्यचन्द्रानिलसुप्रभावम् ।
सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥५४॥

जो संसार के कारणभूत प्रधान आदि को भी उत्पन्न करनेवाले परम कारणरूप हैं एवं वेद को जाननेवाले ब्रह्माजी से अतिश्रेष्ठ हैं और आदित्य चन्द्रमा एवं वायु प्रभृति को उन उनके कार्य सम्पादन के लिये सामर्थ्य प्रदान करनेवाले हैं, तथा सर्वात्मक यानी अभिन्न निमित्तोपादान रूपसे कारण अवस्था में सूक्ष्म चिदचित् रूपसे और कार्यावस्था

में स्थूल चिदचित् स्वरूप से सभी में ओत प्रोत रहनेवाले होने से सर्वगत स्वरूपवाले एवं तमस यानी प्रकृति-लीलाविभूति से पररूपेण विद्यमान अर्थात् नित्यविभूति में समवस्थित, हैं ऐसे सर्वेश्वर श्रीरामजी को सादर नमन करता हूँ ।।५४।।

अथैश्वर्यमुद्दिशन् प्रणमति भवोद्भवमिति **रामं नमामि कीदृशं भवत्यस्माज्ज गदितिभवः प्रधानं तस्याप्युद्भवं सर्वोपादानमिति तमः शब्दितसूक्ष्माच्चिच्छरीरात् श्रीरामात् प्रधानादेः प्रपञ्चस्योत्पत्तिरिति प्रागवोचामः । निमित्ततामाह वेदविदो विधेरपि वरिष्ठं तदनुग्रहात्तस्य जगत् स्त्रष्टृत्वमित्यर्थः । आदित्यादिषु शोभनः प्रभावो यस्य तं यदनुग्रहात्ते जगदधिकारिणः इत्यर्थः । सर्वात्मकं सर्वान्तर्यामिणं सर्वगतं सर्वव्यापकस्वरूपं यस्य तं अन्तर्बहिश्च जगद्व्याप्यस्थितमित्यर्थः । यच्च किञ्चित् जगत्सर्वमित्यादिश्रुतेः । तमसः प्रकृतेः परस्तात्परं विशेषात्मनेतिशेषः ।।५४।।**

निरञ्जनं निःप्रतिमं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रपञ्चम् ।
नित्यं ध्रुवं निर्विषयस्वरूपं निरन्तरं राममहं भजामि ।।५५।।

जो शुद्ध चित् स्वरूप होने से अज्ञान रहित हैं एवं अन्य सभी प्रकार के उपमा रहित हैं तथा चेष्टा रहित और आधार रहित यानी अपने लिये स्वयं ही आधार होने से अन्य आधार से रहित हैं एवं कला मुहूर्त आदि काल के गति से शून्य तथा प्रपञ्च रहित हैं और नित्य तीनों काल में एक स्वरूप से रहनेवाले हैं तथा अचल स्वरूप हैं एवं निर्विषय यानी प्रकृत विषयों से रहित स्वरूपवाले हैं ऐसे योगियों के अन्तःकरण में सदा रमणशील श्रीरामचन्द्रजी को मैं निरन्तर भजन-स्मरण करता हूँ ।।५५।।

स्वरूपनिष्ठं स्वभावमुद्दिशन् प्रणमति निरञ्जनमिति **निरञ्जनं शुद्धं चिदेकरस मिति यावन् । निष्प्रतिमं निरूपमं 'न यस्य प्रतिमा अस्तीति' श्रुतेः । निरीहं पुरुषार्थ प्रापकचेष्टा रहितं तेषां स्वतः सिद्धेरित्यर्थः । निराश्रयं निराधारं स्वमहिमाधारमि त्यर्थः । 'स भगवान् कस्मिन् प्रतिष्ठित इति स्वमहिम्नीति श्रुतेः । निष्कलं कलाः कलावयवास्ताभ्यो निर्गतं कालानधीनस्वरूपमित्यर्थः । कलामुहूर्त्तादिमयश्च कालो नयद्विभूतेः परिणामहेतुरिति स्मृतेः । अप्रपञ्चं प्रपञ्चयति भृत्यसेवामिति प्रपञ्चस्ता दृशो न भवतीत्यप्रपञ्चस्तमिति स्वल्पयापि सेवया तुष्यन्तमितिभावः । यदाह 'न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया । कथंचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति' इति नित्यंत्रिकालैकरसं ध्रुवमचलं विभूत्वात् निर्विषयं प्राकृतविषयव्यासंगशून्यं स्वरूपं यस्य तं निरन्तरं स्वभक्तविच्छेदवर्जितं भक्तजनैकप्रियमित्यर्थः ।।५५।।**

भवाब्धिपोतं भरताग्रजं तं भक्तिप्रियं भानुकुलप्रदीपम् ।
भूतत्रिनाथं भुवनाधिपत्यं भजामि रामं भवरोगवैद्यम् ॥५६॥

जो भव-संसार रूप समुद्र से पार उतारनेवाले नौका स्वरूप हैं तथा श्रीभरतजी से समाराश्रित उनके बडे भाई हैं एवं भक्तिमान साधकों के लिये प्रिय हैं और सूर्यकुल के सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक हैं तथा प्राणियों के जाग्रत स्वप्न एवं सुषुप्ति तीनों अवस्था के संरक्षक हैं एवं तीनलोक चौदह भुवनों के एकमात्र अधिपति हैं और संसार रूप यानी जन्म मृत्यु स्वरूप महारोग को सदा के लिये दूर करनेवाले सायुज्यमुक्ति दाता वैद्य हैं ऐसे श्रीरामजी को भजता हूँ तात्पर्य यह कि जन्ममृत्यु छुडाकर सायुज्यमुक्ति देनेवाले सर्वेश्वर श्रीरामजी हैं अन्य नहीं अतः साधकों को श्रीरामशरणागति स्वीकार कर आत्म कल्याण करलेना चाहिये ॥५६॥

भवाब्धीति तं रामं **भजामीत्यन्वयः । कीदृशं भवाब्धेः संसारसिन्धोः पोतं नावं तारकमित्यर्थः । भरताग्रजं तज्ज्येष्ठं तद्भक्तिविषयमितियावत् । भूतत्रिनाथं भूतानां प्राणिना त्रिषु कालेषु नाथं स्वामिनं सर्वदा तद् रक्षकमित्यर्थः । यतो भूवनाधिपत्यं भूवने स्वाधिपत्यं स्वामित्वं यस्य तं सर्वेश्वरमित्यर्थः । भवरोगस्य संसारदुःखस्य वैद्यं विनाशकं भवाब्धिपोतमित्यतो विद्यमानात् संसारात् पारंनयतीति प्रतीतिर्भवरोगवैद्य मित्यनेन तत्सम्बन्धविनाशकारित्वमुच्यते यथासौ पुनर्नप्रतीयेत शेषं स्फुटम् ॥५६॥**

सर्वाधिपत्यं समरंगधीरं सत्यं चिदानन्दमयस्वरूपम् ।
सत्यं शिवं शान्तमयं शरण्यं सनातनं राममहं भजामि ॥५७॥

जो सर्वाधिपत्य यानी त्रिपादविभूति पर्यन्त एकाधिकार स्वामित्ववाले हैं एवं संग्राम भूमि में जानेवाले में अति धीर हैं तथा सर्वदा एक रूपसे रहनेवाले सत्य स्वरूप हैं और स्वप्रकाश एवं आनन्दमय स्वरूपवाले हैं एवं कल्याण के स्थान तथा शान्तिमय हैं और शरण्य सभी को शरण प्रदान करनेवाले अनादि स्वरूप हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी का मैं सदा भजन करता हूँ ॥५७॥

सर्वाधिपत्यमिति **सर्वेषामाधिपत्यं प्रभुत्वं यस्य तं सर्वप्रभुमित्यर्थः । समरङ्गधीरं सममशब्दोऽत्र सर्वपर्य्यायः समेषु सर्वेषु रंगेषु स्मरविलासनर्माहवदानरूपेषु कौतुकेषु धीरं निपुणमीति धीरललितधीरोदात्तधीरोद्धतधीरः शान्तभावः श्रीरघुपते रुद्दिष्टो भवति सत्यमिति कारणवस्थत्वेकार्य्यावस्थत्वे च तात्विकमित्यर्थः शिवं मङ्ग**

लात्मकं शान्तमयं क्षोभरहितं शरण्यमाश्रिताभयप्रदं यदाह स्वयमेव 'आर्तो वा यदि वा दृप्तः परेषां शरणागतः । अरिः प्राणान् परित्यज्य रक्षितव्यः कृतात्मना' इति । आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तमस्याभयं मया । विभीषणो वा सुग्रीव ? यदि वा रावणः स्वयम्' इति च । 'सकृदेव प्रपन्नाय' इत्यादि च प्राग्दर्शितं स्फुटमन्यत् ॥५७॥

कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं कविं पुराणं कमलायताक्षम् ।
कुमारवेद्यं करुणामयन्तं कल्पद्रुमं राममहं भजामि ॥५८॥

जो कार्य स्वरूप संसार की क्रिया के कारण हैं एवं अप्रमेय यानी गुणरूप ज्ञान आदि के परिच्छेद रहि हैं और सर्वज्ञ हैं सनातन हैं तथा कमल दल के समान दीर्घ एवं उज्ज्वल नेत्रवाले हैं और सनकादि कुमारों के ध्यान द्वारा जाने जाते हैं तथा परम करुणामय हैं एवं कल्पद्रुम यानी सभी प्रकार के साधकों को इच्छानुसार फल प्रदान करनेवाले हैं ऐसे श्रीरामजी का भजन करता हूँ ॥५८॥

कार्येति कार्यं जगत्तस्य क्रियानिर्मितिस्तस्याः कारणं हेतु 'स तपोतप्यत स तपस्तत्वा इदं सर्वमसृजत यदिदं किञ्चेति श्रुतेः । अप्रमेयमपरिच्छेद्यस्वरूपगुणं कुमारवेद्यं सनकादिध्येयं कल्पद्रुमं भक्तमनोरथपूरकं स्फुटमन्यद् ॥५८॥

त्रैलोक्यनाथं सरसीरुहाक्षं दयानिधिं द्वन्दविनाशहेतुम् ।
महाबलं वेदनिधिं सुरेशं सनातनं राममहं भजामि ॥५९॥

जो तीनों लोकों के स्वामी हैं एवं कमल के समान नेत्र वाले हैं तथा दया के समुद्र हैं और संसार के सुख दुःखरूप द्वन्दों को नाश करनेवाले हैं एवं अपरिमित बलवाले हैं तथा वेदों के निधि यानी वेदों के मर्यादाओं का पालन करनेवाले हैं और देवताओं के भी देवता हैं ऐसे सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी का मैं भजन करता हूँ ॥५९॥

त्रैलोक्यनाथमिति द्वन्द्वानां शीतोष्णादीनां संसारधर्माणां विनाशहेतुं यद् भक्त्या तन्निवृत्तिरित्यर्थः । महाबलमसंख्येयपराक्रमं यदाह स्वयमेव 'सुदुष्टो वा प्यदुष्टो वा' इत्यादि । वेदनिधिं वेदाश्रयभूतं वेदमर्य्यादाप्रतिपालकं प्रलये तद् रक्षकं वेत्यर्थः । सुरेशं देवदेवं स्फुटमन्यत् ॥५९॥

वेदान्तवेद्यं कविमीशितारमनादिमध्यान्तमचिन्त्यमाद्यम् ।
अगोचरं निर्मलमेकरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥६०॥

जो वेदान्त से वेद्य हैं एवं कवि-सर्वज्ञ तथा सभी के नियन्त्रक हैं तथा आदि मध्य और अन्त से रहित हैं और अचिन्त्य हैं एवं आद्य यानी सबके कारण स्वरूप हैं तथैव अगोचर प्राकृत इन्द्रियों से अग्राह्य हैं एवं निर्मल-प्रकृति के मल से रहित हैं और सर्वदा एक रूपसे रहनेवाले हैं तथा 'तमः रूपा प्रकृति से पर नित्य विभूति में विराजमान हैं ऐसे श्रीरामजी को सदा नमन करता हूँ ॥६०॥

वेदान्तेति **सर्वोपनिषत्प्रतिपाद्यमित्यर्थः । निरपेक्षस्वरूपतया श्रीरामतापनी श्रुत्या सहान्येषां छान्दोग्यादीनामेकवाक्यतया उक्तत्वात् यत ईशितारं सर्वेश्वरं 'श्रुतयः स्मृतयश्चैव युक्तयश्चेश्वरं परम् । वदन्ति तद् विरुद्धं यो वदेत् तस्मान्नचाधमः' इति पाद्मात् । अत एवानादिमध्यान्तं आदिमध्यावसानशून्यं आद्यं सर्वेभ्यः पूर्वसिद्धं परम कारणमित्यर्थः । अचिन्त्यं तर्कागोचरं 'नैषातर्केण मतिरापनेय' इति श्रुतेः । किन्तु गुरुपदेशगम्यं 'आचार्यवनान् पुरुषोवेद' इति श्रुतेः । अगोचरं प्राकृतेन्द्रियाग्राह्यं 'न चक्षुषा पश्यति रूपमस्य' इतिश्रुतेः । किं तु भक्तिग्राह्यमेव 'दृश्यते त्वग्रयाबुद्ध्या सुक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः' इति श्रुतेः । स्फुटार्थमन्यत् ॥६०॥**

अशेषवेदात्मकमादिसञ्ज्ञमजं हरिं विष्णुमनन्तमूर्तिम् ।
अपारसंवित्सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ॥६१॥

जो अशेष यानी सम्पूर्ण वेदों से वेदनीय हैं तथा सभी नामों से पूर्व में प्रसिद्ध श्रीरामनामवाले हैं एवं अज हैं अर्थात् जन्मरूप शरीर संयोग से रहित हैं हरि-भक्तों के दुःखों को हरण करनेवाले विष्णुरूप यानी स्वरूप एवं वस्तुओं से सर्वत्र व्यापक हैं और अनन्तमूर्तिवाले हैं एवं पूर्ण ज्ञानानन्द स्वरूपवाले हैं और एक यानी प्रधान श्रीरामजी स्वरूपवाले हैं एवं परात्पर परब्रह्म श्रीरामजी हैं ऐसे श्रीरामजी का मैं सर्वदा भजन करता हूँ ॥६१॥

अशेषेति **अशेषेषु कृत्स्नेषु वेदेष्वात्मा स्वरूपं यस्य तं सर्ववेदवेद्यमित्यर्थः । 'सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति' इति श्रवणात् । वेदमूर्तिकमिति वा 'नमो वेदादिरूपाय ॐ काराय नमोनमः' इति श्रीरामतापिन्यां तद्विशेषणात् । आदिःप्रथमा सर्वेभ्यः पूर्वसिद्धा संज्ञा रामाद्याख्या यस्य तं अजं जन्माख्य विकारशून्यम् उपलक्षणमिदं मत्स्यादीनां पद्मादीनां दशरथाज्जन्मत्वाविर्भावाभिप्रायमित्यदोषः । अनन्तापरिच्छिन्ना मूर्तिर्यस्य तं बहुषु ध्यातृषु यौगपद्येनाविर्भावात् । अपारे पूर्णे संवित्सुखज्ञानानन्दौ यस्य तं पूर्णज्ञानानन्दधर्मकमित्यर्थः । एकं रूपं सदैकरसमित्यर्थः स्फुटम**

न्यत् ॥६१॥

तत्त्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं स्वतेजसापूरितविश्वमेकम् ।
राजाधिराजं रविमण्डलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि ॥६२॥

जो सनातन पुराण पुरुष हैं एवं परात्पर तत्त्व स्वरूप हैं और एक यानी प्रधानतया स्थित होकर अपने तेज से इस विश्व को पूरित कर अर्थात् सृष्टि स्थिति एवं संहारक के रूपमे स्थित हैं तथा सूर्यमण्डल में स्थित होकर राजाधिराज के रूपमें सभी को प्रकाशित करते हैं और विश्व के ईश्वर हैं ऐसे श्रीरामजी का भजन करता हूँ ॥६२॥

तत्त्वेति परमार्थभूतं स्वरूपं यस्य तं स्वतेजसा निजप्रभावेन पुरितं विश्वं येन तं नियमितविश्वमित्यर्थः स्फुटमन्यत् ॥६२॥

लोकाभिरामं रघुवंशनाथं हरिं चिदानन्दमयं मुकुन्दम् ।
अशेषविद्याधिपतिं कवीन्द्रं नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥६३॥

जो अत्यन्त सुन्दर शरीर से लोगों को अतिआनन्द प्रदान करनेवाले हैं एवं रघुवंश में श्रेष्ठ हैं तथा सत् चित् एवं आनन्दमय स्वरूप होने से लोगों को अनायास अपनी ओर आकर्षित करनेवाले एवं साधकों को सायुज्यमुक्ति प्रदान करनेवाले हैं और सभी प्रकार के विद्याओं के पति एवं सर्वज्ञ शिरोमणि हैं ऐसे तमोगुण प्रधान प्रकृति से पर विराजमान सर्वेश्वर श्रीरामजी को नमस्कार करता हूँ ॥६३॥

लोकाभिराममिति मुकुन्दं मुक्तिदातारम् । अशेषेति सर्वविद्याप्रवर्तकमित्यर्थः । यदुक्तं 'गान्धर्वे च भुवि श्रेष्ठो बभूव भरताग्रजः' इति कवीन्द्रं सर्वज्ञचूडामणिं स्फुटमन्यत् ॥६३॥

योगीन्द्रसंघैः शतसेव्यमानं नारायणं निर्मलमादिदेवम् ।
नतोऽस्मि नित्यं जगदेकनाथमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥६४॥

जो योगेश्वरों के समूहों से अनेक प्रकारों से समाराधित हैं एवं महासमुद्र में शयन करनेवाले निर्मल स्वरूप आदि देव हैं जगत् के एकमात्र आधार हैं तथा तम से पर स्थित आदित्य के समान तेजवाले हैं ऐसे सर्वाधार श्रीरामचन्द्रजी को नित्य नमस्कार करता हूँ ॥६४॥

योगीन्द्रेति शतेन प्रकारेण सेव्यमानं यद्यपि सेव्यमानपदं शतशब्दं समस्तं

तथापि योगीन्द्रसंघैरित्यनेन सम्बन्धमाकांक्षति 'समस्तस्यासमस्तेन नित्याकांक्षेण संगतः' इत्युक्तेः। आदिदेवं सर्वेषां देवानामादिभूतं इदृशं रामं नित्यं नतोऽस्मि ॥६४॥

विभूतिदं विश्वसृजं विराजं राजेन्द्रमीशं रघुवंशनाथम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमूर्तिं ज्योतिर्मयं राममहं भजामि ॥६५॥

जो साधकों के इच्छानुसार ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले हैं एवं विश्व की सृष्टि करने वाले तथा विराज यानी चित् एवं अचित् के अपेक्षया अन्तर्यामीरूप से प्रकाशमान हैं और ब्रह्मादि देवों को भी नियमन करनेवाले हैं राजराजेश्वर हैं तथा रघुवंश के नाथ पालक हैं एवं अचिन्त्य अव्यक्त तथा अनन्त मूर्ति स्वरूप और दिव्य ज्योतिमय हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी का मैं भजन सर्वदा चिन्तन करता हूँ ॥६५॥

विभूतिदमिति **कर्मानुरूपफलप्रदमित्यर्थः । विश्वसृजं जगन्निमित्तं कारणं विराजं विराडन्तर्यामिणं 'तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्' इतिश्रुतेः । विशेषेण राजमान मिति वा यतो राजेन्द्रमव्यक्तं प्राकृतेन्द्रियाग्राह्यं ज्योतिर्मयं स्वप्रकाशरूपं स्फुट मन्यत् ॥६५॥**

अशेषसंसारविकारहीनमादिस्तुसंपूर्णसुखाभिरामम् ।
समस्तसाक्षीतमसः परस्तान्नारायणं विष्णुमहं भजामि ॥६६॥

जो संसार के समस्त विकारों से हीन हैं एवं सवों से आदि कारण हैं और सम्पूर्ण सुखों के अधिकरण या सभी सुखों में रमण करनेवाले दिव्य स्वरूपवाले तथा समस्त जडचेतनवर्ग के साक्षीरूप होते हुये भी तम यानी सूक्ष्म प्रकृति से भी परतया विद्यमान आर्थात् नित्य विभूति में रमणशील एवं नारायण यानी क्षीरसागर में निवास करते हुये सृष्टि करनेवाले ऐसे विष्णु सर्वव्यापक श्रीरामचन्द्रजी का मैं भजन करता हूँ ॥६॥

अशेषेति **जन्मादिविकारैः सांसारिकैः धर्मैः रहितं यत आदिः सर्वेभ्यः पूर्व-सिद्धं परमकारणमिति यावत् । अत्राम् विभक्तेः सुरादेशः सुपां सुलुक् पूर्वसवर्णा च्छेया डाड्यायाजाल इति प्राणिनिस्मृतेः । आदि सुसम्पूर्णसुखाभिराममिति पाठे सुगमं सम्पूर्णेन सुखेनाभिरामं बहुविवित्रनृत्यगीतादिविशिष्टश्रृङ्गारनन्दसुन्दरमित्यर्थः । न चेतृशस्येतरानवधानमित्याह समस्तसाक्षीति पूर्ववदमः सुरादेशः शिष्टं स्पष्टम् ॥६६॥**

मुनीन्द्रगुह्यं परिपूर्णमेकं कलानिधिं कल्मषनाशहेतुम् ।
परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतोमहान्तम् ॥६७॥

जो सदा साधन परायण मुनिजनों से भी गोपनीय एवं स्वतः परिपूर्ण स्वरूप तथा एक अद्वितीय स्थितिवाले है और कलाओं के खजाने हैं तथा सभी प्रकार के कल्मषों के नाशका कारणभूत हैं एवं परात्पर यानी पररूप से प्रसिद्ध श्रीविष्णु ब्रह्मा कृष्ण नारायण शंकर आदि से पर सभी के कारणरूप से विद्यमान हैं इसी तत्त्व को वशिष्ठ संहीता भी स्पष्ट करती है-

'परान्नारायणाच्चैव कृष्णात्परतरात्तथा ।
यो वै परतमो श्रीमान् रामोदाशरथिस्वराट्'

यानी पर रूप से प्रसिद्ध श्रीनारायण से श्रीकृष्ण परतर हैं उनसे भी स्वतः प्रकाशमान दशरथनन्दन श्रीराम परतम हैं। एवं जो स्मरण मात्र से अविद्यादि समस्त मलों को नाश करनेवाले परम पवित्र हैं तथा आकाश आदि महान् परिणाम वालों से भी परम महान् हैं ऐसे सर्वेश श्रीरामजी को सदा नमन करता हूँ ॥६७॥

मुनीन्द्रेति । **मुनीश्वराणामपि गुह्यं रहस्यरूपमित्यर्थः । कलानिधिं चतुःषष्टि कलाधारं तास्वतिप्रवीणं कलानिजांशास्तासाम् आश्रयभूतं यतः पूर्णं स्वयं रूप मिति वा कल्मषनाशहेतुमिति कुतस्तत्राह यत्परमं पवित्रं परात्परमिति सर्वोत्कृष्टं परमं पवित्रं स्मृतमात्रं सद्विद्यापर्यन्तं मलं यद् वस्तु निरस्यति तदात्मकमित्यर्थः । महतोऽपि दिगाकाशादेः पदार्थान् महान्तं परममहत्वगुणकमित्यर्थः । 'सभूमिं सर्वतः स्पृत्वा अत्यतिष्ठद् दशांगुलम्' इति पुरुषसूक्तात् । भूमिमित्युपलक्षणं प्रकृत्यादीनां तत्वानाम् ॥६७॥**

ब्रह्माविष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो देवतास्तथा ।
आदित्यादिग्रहाश्चैव त्वमेव रघुनन्दन ? ॥६८॥

हे रघुनन्दन ! रघुवंशियों या शरणापन्न जीवों को आनन्द प्रदान करनेवाले श्रीराम जी ! ब्रह्मा विष्णु एवं शंकर तथा इन्द्र और अन्य देवता एवं सूर्य आदि ग्रह भी आपही हैं यानी ये आपके शेषभूत आज्ञा वशवर्ति हैं स्वतन्त्र कोई भी नहीं है ॥६८॥

एवं माधुर्यैश्वर्यादिगुणवैशिष्ट्येन श्रीरामं स्तुत्वेदानीं स्वेतरनिखिलवैशिष्ट्ये नाद्वितीयत्वं निरूपयन् स्तौति ब्रह्माविष्णुरिति । ब्रह्मा चतुर्मुखो जगत्स्त्रष्टा, विष्णुः

क्षीराब्धिपतिर्जगत्पालकः रुद्रश्च तत्संहर्त्ता, देवेन्द्रः शचीपतिः देवताद्यादयः आदित्यादयश्च नवग्रहाः एते सर्वे त्वद्विशेषणभूतास्त्वद् विशिष्टास्त्वत्तो नातिरिच्यन्ते नहि दण्डिनः, पुरुषादस्ति दण्डस्य भेदः दण्डकोटिप्रविष्टत्वात्, । विशेषणविशेष्ययोर्दण्डपुरुषयोः स्वरूपधर्मकृतो भेदस्तु न निवार्यते ॥६८॥

तापसा ऋषयः सिद्धाः साध्याश्च मरुतस्तथा ।

विप्रा वेदास्तथा यज्ञाः पुराणं धर्मसंहिताः ॥६९॥

हे रघुनन्दनजी ! सदा तपस्या में रत साधकजन एवं तत्त्वदर्शी श्रीवशिष्ठ तथा श्रीविश्वामित्र प्रभृति ऋषिगण और कपिल आदि सिद्ध जन तथा साध्य योनि देवगण एवं उनपचास मरुतगण तथा यज्ञों के अनुष्ठाता निप्र और ऋक् यजु साम एवं अथर्व वेद एवं ज्योतिष्टोम प्रभृति यज्ञ और अठारह पुराण तथा वशिष्ठ पराशर प्रभृति धर्मसंहिताओं का स्वरूप भी आप ही हैं ॥६९॥

तापसा इति तपस्विनः ऋषयो दुर्वासा विश्वामित्रप्रमुखाः सिद्धाः साध्याश्च तत्तत् संज्ञका मरुतो देवाः विप्रा यज्ञानुष्ठातारः वेदा यज्ञाविधानाः यज्ञा ज्योतिष्टोमादयः पुराणं श्रीविष्णुपुराणादिधर्मसंहिता वशिष्ठादिस्मृतयः ॥६९॥

वर्णाश्रमास्तथा धर्मा वर्णधर्मास्तथैव च ।

यक्षराक्षसगन्धर्वा दिक्पाला दिग्गजादिभिः ॥७०॥

सनकादिमुनिश्रेष्ठास्त्वमेव रघुपुङ्गव ? ।

बसवोऽष्टौ त्रयः काला रुद्रा एकादशस्मृताः ॥७१॥

हे रघुपुंगव ! रघुकुल में श्रेष्ठ श्रीरामजी ! ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्र ये चार वर्ण तथा ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ एवं संन्यास ये चार आश्रम और ब्राह्मणधर्म क्षत्रिय धर्म वैश्यधर्म एवं शूद्रधर्म तथा यक्ष राक्षस एवं गन्धर्व दिक्पाल इन्द्रादि दश देवता तथा दिशाओं के गजों और सनक सनन्दन सनातन एवं सनत्कुमार प्रभृति श्रेष्ठ मुनिगण और धर, ध्रुव, सोम, विष्णु, अनिल, अनल, प्रत्यूष एवं प्रभास, आठवसु तथा भूत भविष्य और वर्तमान तीन काल और अज, एकपाद अहिवघ्न पिनाकी, अपराजित, त्र्यम्बक, महेश्वर, वृषाकपि शम्भु हरण एवं ईश्वररूप ग्यारह रुद्र इन सभी के तत् तत् स्वरूप में आप ही विराजमान हैं ॥७०-७१॥

वर्णा इति वर्णा ब्राह्मणादयः। आश्रमा ब्रह्मचर्यादयः, धर्मा आश्रमधर्माः दिग्गजादिभिः सहिता दिक्पालाश्च। सनकादीति। त्रयकालाभूतवर्तमानभविष्यद्रूपाः ॥७०-७१॥

तारका दशदिक् चैव त्वमेव रघुनन्दन ?।
सप्तद्वीपाः समुद्राश्च नागानद्यस्तथाद्रुमाः ॥७२॥

हे रघुनन्दन ! अश्विनी भरणी प्रभृति सत्ताईश नक्षत्रगण एवं प्राची, अवाची, उदीची अवाची ईशान, आग्न्येय, नैऋत्य, वायव्य, ऊर्ध्व, एवं अधः रूपदशदिक् पाल और जम्बु, प्लक्ष, शल्मली, कुश, क्रौञ्च शाक, तथा पुष्कर सात द्वीप और लवण, क्षीर, दधि एवं घृत, चारसमुद्र नाग अनन्तवासुकी कम्बल, कर्कोंटक, प्रभृति नागगण एवं भागीरथी सरयू यमुना प्रभृति नदियां तथा द्रुम, तृण, गुल्प प्रभृति भेदों से नाना रूपों में आप ही विद्यमान हैं ॥७२॥

तारकेति तारका नक्षत्राणि चतस्रो दिशस्तथा विदिशस्तथा विदिशश्चेत्यष्टौ ऊर्ध्वमधश्चेति दशदिशः द्वीपाः समुद्राश्च सप्तनागाः वासुक्यादयः नगा इति पाठेतु सुमेरु प्रभृतयो गिरयः नद्यो गङ्गाद्याः द्रुमाश्च पारिजातादयः पिप्पलादयश्च ॥७२॥

स्थावरा जङ्गमाश्चैव त्वमेव रघुनायक ?।
देवतिर्यग् मनुष्याणां दानवानां तथैव च ॥७३॥
माता पिता तथा भ्राता त्वमेव रघुवल्लभ ?।
सर्वेषां त्वं परब्रह्म त्वन्मयं सर्वमेव हि ॥७४॥

हे रघुनायक ! सभी स्थावर प्राणी एवं सब जङ्गम प्राणी भी आप ही हैं और देवता पशु पक्षी तथा मनुष्यों एवं दानव तथा राक्षसों के भी आत्मा के रूपमें आप ही हैं। हे रघुवल्लभ ? माता पिता तथा भाई के रूप भी आप ही हैं। अतः सभी के परब्रह्म ानी सृष्टि पालन एवं संहार करनेवाले भी आप ही हैं। इसलिये सम्पूर्ण चराचर रूप यह जगत् त्वन्मय अर्थात् सर्वशेषीतया स्थित आप में ही ओतप्रोत है ॥७३-७४॥

मुख्यानुक्त्वान्यान् सर्वान् संगृह्णाति स्थावरा इत्यर्धेन हे रघुनायक सर्वं त्वमेव ॥७३॥ अथ सर्वेषामुत्पत्तिपालनकारी सख्येन हर्षप्रदश्च त्वमेवेत्याह देवतिर्य्यगित्येकेन। ननु त्वमेवेत्थं मां स्तौषि। नत्वन्येकेपीति चेत्तत्राह सर्वेषामिति सार्धेन सर्वेषां

वेदवादिनां मते त्वमेव परंब्रह्म न तु त्वदतिरिक्तं किञ्चिदस्ति हि यतः सर्वं जगत् त्वन्मयं त्वत्कार्यं भवति यस्माज्जगदुदयादि तदेव ब्रह्मेत्याह भगवान् बादरायणः जन्माद्यस्य यतः इति ॥७४॥

त्वमक्षरं परं ज्योतिस्त्वमेव पुरुषोत्तमः ।
त्वमेव तारकं ब्रह्म त्वत्त्वोऽन्यन्नैव किञ्चन ॥७५॥
शान्तं सर्वगतं सूक्ष्मं परब्रह्म सनातनम् ।
राजीवलोचनं रामं प्रणमामि जगत्पतिम् ॥७६॥

हे श्रीराम ! आपके सबके नियन्ता एवं सबके आधार होने के कारण आपका कभी क्षरण नहीं होता है एवं परम ज्योति स्वरूप पुरुषोत्तम भी आप ही हैं तथा तारक ब्रह्म भी आप ही हैं अतः संसार में आप से अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है अत एव आप शान्त हैं, सर्वगत हैं सूक्ष्म स्वरूप हैं एवं सनातन परब्रह्म हैं । अतः ऐसे कमल के समान नेत्र वाले जगत् के पति सर्वेश श्रीरामजी को मैं सर्वदा प्रणाम करता हूँ ॥७५-७६॥

ननु वेदे क्वचिदक्षरं ब्रह्मेति, क्वचित् ज्योतिर्ब्रह्मेति क्वचित् पुरुषोत्तमो ब्रह्मे त्युच्यते । तदेव तारकं संसारसिन्धोरिति चाभिधीयते कथं मे ब्रह्मत्वं मनुष्यस्येति चेत्तत्राह त्वमक्षरमिति । तत्राक्षरादिशब्दैस्त्वमेवाभिधीयसे यत्त्वत्तोऽन्यत् किञ्चिद् वस्तु नास्ति ॥७५॥ पुनः प्रणमति शान्तमिति स्फुटम् ॥७६॥

卐 श्रीव्यासउवाच 卐

ततः प्रसन्नः श्रीरामः प्रोवाच मुनिपुङ्गवम् ।
तुष्टोऽस्मि मुनिशार्दूल ? वृणीष्व वरमुत्तमम् ॥७७॥

श्रीवेदव्यासजी कहते हैं कि पूर्वोक्त प्रकार से श्रीनारदजी के स्तुति करने के वाद मुनियों में श्रेष्ठ श्रीनारदजी को अतिप्रसन्न होकर श्रीरामजी ने कहा हे मुनिश्रेष्ठ ! मैं आप पर सन्तुष्ट हूँ अतः आप यथेच्छ उत्तम वरदान को मुझसे मांगिये ॥७७॥

एवं स्तुवति श्रीनारदे श्रीरामप्रसादो जात इत्याह श्रीवेदव्यासउवाचेति मुनिपुङ्गवं सर्वमुनिश्रेष्ठं नारदं स्फुटमन्यत् ॥७७॥

卐 श्रीनारद उवाच 卐

यदि तुष्टोऽसि सर्वज्ञ ? श्रीराम ? करुणानिधे ? ।
त्वन्मूर्त्तिदर्शनेनैव कृतार्थोऽहं ममेप्सितम् ॥७८॥

श्रीनारदजी कहते हैं हे सर्वज्ञ ! हे करुणा के समुद्र सर्वेश्वर श्रीरामजी ! यदि आप मुझ पर तुष्ट-प्रसन्न हैं तो आपके दिव्य श्रीविग्रह के दर्शन से ही मैं कृत कृत्य हो गया हूँ तथापि प्रभो ! मेरे इच्छित आपके श्रीविग्रह का सर्वदा दर्शन हुआ करे ऐसा वरदान प्रदान करें ॥७८॥

वरदित्सुं श्रीरामं प्रति नारदः प्राह यदि तुष्टोऽसीति । यदि मह्यमुत्तमं वरं दातुं प्रतिश्रृणोऽषि तर्हि द्विभुजश्यामसुन्दरत्वं श्रीमूर्तिसाक्षात्कारो मे सर्वदाऽस्तु तेनैवाहमधिगतपरमपुरुषार्थः स्यां न त्वन्येन देवेन्द्रादिकृतेन सत्कारेण न चाप्रतिहतसर्वसंचारेण न पुनरणिमादिभिः सिद्धिभिश्चोपस्थिताभिः यस्मादीप्सितमाप्तुमिष्टमनैतत् सा मान्ये नपुंसकम् ॥७८॥

धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं पुण्योऽहं पुरुषोत्तम ? ।
अद्य मे सफलं जन्म जीवितं सफलं च मे ॥७९॥

हे पुरुषोत्तम ! आज मैं धन्य हो गया हूँ एवं कृतकृत्य भी हो गया हूँ और पुण्य यानी सुकृतिवाला भी हो गया हूँ। हमारा जन्म आज सफल हो गया है एवं हमारा जीवित रहना भी आज ही सफल हुआ क्योंकि मुझे दिव्य मङ्गल श्रीविग्रह आपका दर्शन प्राप्त हुआ ॥७९॥

एवं श्रीरामसाक्षात्काररूपं वांछितफलं प्राप्यात्मानमात्मीयानि साधनानि च प्रशंसति धन्योऽहमित्यादि त्रयेण तत्र द्वयं स्फुटार्थः ॥७९॥

अद्य मे सफलं ज्ञानमद्य मे सफलं तपः ।
अद्य मे सफलो यज्ञस्त्वत्पादाम्भोजदर्शनात् ॥८०॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी ? मेरा ज्ञान सफल है एवं मेरा तप भी आज सफल हुआ और मेरा यज्ञ भी आपके श्रीचरणकमल के दर्शन से सफल हो गया है ॥८०॥

अद्येति सर्वतीर्थयात्रादिकं तथा त्वन्नामस्मरणं चाद्यैव सफलं तदुद्देश्यत्वात्साक्षात्कारस्य सिद्धेः । अथ सदैवमस्त्विति प्रार्थयते त्वदिति । त्वत्पादाब्जयुगलविषयां सतीमव्यभिचारिणीं भक्तिं पूजनसंवाहनादिलक्षणां देहीति ॥८०॥

अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा ।
त्वत्पादाम्भोरुहद्वन्द्वे सद्भक्तिं देहि राघव ? ॥८१॥

हे राघव ! धर्मपालन आदि सभी क्रियायें एवं आपके दर्शन से आपका नाम स्मरण भी सफल हो गया तथापि परमोदार श्रीरामजी ! आपके श्रीचरणरूपी युगल कमलों में मेरी भक्ति सर्वदा बनी रहे ऐसा वरदान प्रदान करें ॥८१॥

हे राधवेति ? रघुवंशोद्भवानां प्रति श्रुतमवस्यं देयमितिभावः ॥८१॥

ततः परमसंप्रीतो रामः प्राह स नारदम् ॥८२॥

पूर्वोक्त प्रकार के श्रीनारदजी के कहने पर परम प्रसन्न हुए सब जगप्रसिद्ध सर्वेश श्रीरामचन्द्रजी ने नारदजी को कहा ॥८२॥

तत इति स्वपदारविन्दविषयकनारदानुराग इत्यर्थः ॥८२॥

卐 श्रीरामचन्द्र उवाच 卐

मुनिवर्य ? महाभाग ? मुने ? त्विष्टं ददामि ते ।
यत्त्वया चेप्सितं सर्वं मनसा तद् भविष्यति ॥८३॥

श्रीरामचन्द्रजी ने कहा-हे मुनिश्रेष्ठ ! हे महाभाग ! मुनितत्त्वचिन्तन परायण नारद जी ! आपके लिये मैं अभिलषित पदार्थ को देता हूँ जो आपने मन से इच्छा की है वह सब सुसंपन्न हो जायगा इसमें सन्देह नहीं ॥८३॥

स्वयमनुरागरीतिविज्ञातत्वात् परमप्रीतोऽतितृप्तः सन्नारदमाह श्रीराम इति हे मुनिवर्य्येति हे महाभागेति हे मुने इति च संबोधनत्रयमत्यादरादतिस्नेहाच्च ते तवेष्टं तु ददामि तुरवधारणे । त्वया यन्मनसा ईप्सितं तत् सर्वं भविष्यति च शब्दात् त्वत् सदृशैस्त्वदन्यैश्चान्यैर्यद् वाञ्छनीयं तदप्यहं तेभ्यो दास्यामीत्युक्तम् ॥८३॥

ψ श्रीनारद उवाच ψ

वरं न याचे रघुनाथ ? युष्मत्यादाब्जभक्तिः सततं ममास्तु ।
इदं प्रियं नाथ ! वरं प्रयच्छ पुनः पुनस्त्वामिदमेव याचे ॥८४॥

श्रीनारदजी ने कहा-हे रघुनाथजी ? मैं आप से भोग ऐश्वर्य आदि प्रदायक वरदान को नहीं मांग रहा हूँ पर हे नाथ ! आपके श्रीचरणकमल की भक्ति सर्वदा मुझे प्राप्त हो यही सभी को आह्लादित करनेवाला सर्वप्रिय वरदान को प्रदान करें, वार-वार आपसे इसीको मांगता हूँ ॥८४॥

अथ श्रीनारद ईप्सितं परं प्रकटयन् स्वीकरोतित्याह श्रीनारद इति **हे रघुनाथ ?**

वरं राजैश्वर्य्यकामभोगादिरूपमहं न याचे तर्हि कीदृशं त्वं याचसे तत्राह युष्मदिति । भवत् पादाम्बुजभक्तिर्मम सततमस्तु तदर्चनलक्षणात् तदनुरागलक्षणाच्च सा निरवच्छिन्नमधुधारावत् सर्वदानुवर्त्ततामित्यर्थः । हे नाथ ? इदमेव त्वत्पादारविन्दभक्तमकरन्दरूपं वरं प्रयच्छन् नारदः वधुवृत्ताय मह्यं देहीति पुनः पुनरिदमेव वरं त्वामहं याचेऽभ्यर्थयेति वरान्तरार्पणात् तं निवर्त्तयेति ध्रुवादिभ्य इव राज्यादितदनिष्टमपि कदाचित् महामनाः दद्यात् ॥८४॥

ॐ श्रीवेदव्यास उवाच ॐ

इत्येवमीडितो रामः प्रादात्तस्मै वरान्तरम् ।
विरराम महातेजः सच्चिदानन्दविग्रहः ॥८५॥

श्रीवेदव्यासजी ने कहा-पूर्वकथित प्रकार से संप्रार्थित श्रीरामजी ने नारदजी को दूसरा वरदान दिया अनन्तर महाप्रभाव से सम्पन्न सत् चित् एवं आनन्दस्वरूप श्रीरामजी मौन हो गये ॥८५॥

श्रीरामस्तु महोदारस्तत्प्रार्थितं स्वपादारविन्दभक्तिं दत्वाथ तदिच्छारूपमेव वरान्तरं ददावित्याह श्रीवेदव्यास इति इत्येवमिति । इति शब्दः प्रकरणपूर्तिद्योतनार्थः । एवं पूर्वोक्तरीत्या नारदेनेडितः श्रीरामस्तस्मै वरान्तरं प्रादात् किं तत् अद्वैतं ज्ञानं कथा तस्य श्रीरामस्य नामस्मरणं रामाद्यभिधानचिन्तनं मृणालतन्तुवत् चित्तानुवृत्तं तद्यथा स्यात् एतत् चातिप्रेष्ठे तच्चित्ते स्वयं भासितुमिति ज्ञेयम् विशेषणभूताः सर्वे पदार्थास्तत्तद्विशिष्टा तस्मान्नातिरिच्यन्ते तदन्तर्यामि तत् पर्यन्ताश्च भवन्तीति विशिष्टाद्वैतज्ञानमत्राभिमतं विरराम तूष्णीं बभूव महातेजा इति । तत्प्रभावादेव तादृशं ज्ञानमभूदिति मनुष्यवस्यैव तथात्वेन स्मृतौ भानमभूदितिभावः गाथा छन्दः ॥८५॥

अद्वैतममलं ज्ञानं त्वन्नामस्मरणं तथा ।
अन्तर्धानं जगामाथ पुरतस्तस्य राघवः ॥८६॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी से श्रीनारदजी को प्रदत्त दूसरे वरदान का विवेचन श्रीव्यासजी करते हैं श्रीरामतत्त्व अद्वैत यानी श्रीरामजी के समान या अधिक तत्त्व दूसरा नहीं है अतः वे अद्वैत कहलाते हैं । एवं अमल अर्थात् सभी प्रकार के

प्राकृतिक मलों से रहित और स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप हैं इसप्रकार के स्वरूप को लक्ष्य में रखकर सर्वदा श्रीरामनाम का स्मरण किया करें यहि सायुज्य मुक्ति का साधन है अन्य नहीं, इसप्रकार कहकर श्रीराघवजी श्रीनारदजी के दृष्टि से कुछ काल के लिए अन्तर्धान हो गये ॥८६॥

अन्तर्धानमित्यर्धकम् । अथ साङ्गवरदानान्तरं राघवस्तस्य नारदस्य पुरतोऽग्रेऽन्तर्धानं जगाम प्राप तदग्रवर्त्ये वसन् तदुक्तमतिशयं द्रष्टुं कौतुकेक्षण मन्तर्दधौ इतरथा वरदानवाक्यव्याकोपापत्तिः । राघव इति 'रामो द्विर्नाभिभाषत इति सत्यवाक्यत्वं व्यज्यते ॥८६॥

इति श्रीरघुनाथस्य स्तवराजमनुत्तमम् ।
सर्वसौभाग्यसम्पत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम् ॥८७॥

इसप्रकार से पूर्व में वर्णित श्रीरघुनाथजी का सर्वश्रेष्ठ यह श्रीरामस्तवराज है जो पाठ करनेवाले साधकों को सभी प्रकार के सौभाग्य एवं सर्वप्रकार के सम्पत्तियों को प्रदान करनेवाला और कल्याण दाता तथा सायुज्यमुक्ति देनेवाला है ॥८७॥

अथ स्तवराजफलानि वक्तुमुपक्रमते इति श्री इति । अनुत्तमं सर्वोत्तममिति अर्थः । सर्वेति सौभाग्यं पुंसां व्यवहारिणां राजादिसत्कारः विरक्तानां गुर्वादि सत्कारः स्त्रीणांपत्यादिसत्कारश्च सम्पत्तिरचला लक्ष्मीः मुक्तिरविद्याछेद पूर्विका श्रीरामप्राप्तिः ॥८७॥

कथितं ब्रह्मपुत्रेण वेदानां सारमुत्तमम् ।
गुह्याद्गुह्यतरं दिव्यं तव स्नेहात् प्रकीर्तितम् ॥८८॥

युधिष्ठिर ! यह श्रीरामस्तवराज ऋक् यजु साम एवं अथर्व वेदों का उत्तमसार है जो ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमारजी ने नारदजी को उपदेश दिया था यह परमदिव्य एवं गुह्यगोपनीय से भी परम गोपनीय रहस्यमय है तुम्हारे स्नेह से मैंने प्रकाशित किया है ॥८८॥

ब्रह्मपुत्रेण सनत्कुमारेण नारदेन च तव युधिष्ठिरस्य स्नेहान्मया श्रीव्या

स्मेन प्रकीर्त्तितम् ॥८८॥

यः पठेच्छृणुयाद्वापि त्रिस्यन्ध्यंश्रद्धयान्वितः ।
ब्रह्महत्यादि पापानि तत्समानि बहूनि च ।
स्वर्णस्तेयसुरापांनगुरुतल्पायुतानि च ॥८९॥

जो कोई भी साधक श्रद्धा से युक्त होकर प्रातः मध्याह्न एवं सायंकाल में इस श्रीरामस्तवराज को पढता है या सुनता है वह ब्रह्महत्या आदि महापाप या अन्य कोई महापाप के समान अनेक पापों से तथा सोने की चोरी मदिरापान एवं अयुतवार गुरुशैय्यागमनरूप पापो से छूट जाता है ॥८९॥

अथ स्तवराजस्य ब्रह्मविद्यात्वं दर्शयन् तस्यानुषंगिकं फलमाह यः पठेदिति। तत्समानि ब्रह्महत्या सदृशानि बहूनि कानीत्यपेक्षायामाह स्वर्णेति ॥८९॥

गोवधाद्युपपापानिह्यनृतात्सम्भवानि च ।
सर्वैः प्रमुच्यते पापैः कल्पायुतशतोद्भवैः ॥९०॥

तथैव गोवध आदि उपपातक एवं मिथ्याभाषण से जायमान पापों या दशसहस्रों या अनन्तवर्षों से हुए अन्य प्रकार के अनन्त अनन्त प्रकार के सभी पापों से छूट जाता है ॥९०॥

स्वर्णस्तेयादीनामयुतानि तत्संख्याकानीत्यर्थः । एतानि महापातकानि भवन्ति गोबधादीन्युपपातकानि भवन्ति अनृतात् मिथ्याभाषणात्संभवो येषां तानि च पापानि असन्धिविभक्त्यलोपश्चार्षः । कल्पायुतशतोद्भवैरनन्तजन्मोपार्जितैः पापैः श्रीरामस्तवराजपाठात् प्रमुच्यते तानि पापानिस्तवराजस्त्याजयति तानि पुनर्दुष्टगामीनि भवन्ति यथा पुष्करपलाश आपो न श्लिष्यन्त एवमेव विदिपापं कर्म न श्लिप्यन्त इति तस्य पुत्रादयमुपयन्ति सुहृदः साधुकृत्यं दुर्हृदः पापकृत्यमिति च श्रवणात् अकृताभ्यागमस्त्वैश्वरप्रभावान्न दोषः इत्थं सञ्चित पापनाशकत्वमुक्तं भवति ॥९०॥

मानसं वाचिकं पापं कर्मणा समुपार्जितम् ।
श्रीरामस्मरणेनैव तत्क्षणान्नश्यतिध्रुवम् ॥९१॥

मानवों के मन से अर्जित वचन से भी अर्जित एवं कर्म शरीर से समुपार्जित पाप समूह श्रीरामचन्द्रजी के स्मरण मात्र से ही निश्चय रूपसे तत्काल नाश हो जाते हैं ॥९१॥

अथ क्रियमाणपापनाशकत्वमाह मानसमिति श्रुतिश्च यथैषीका तूलमग्नौ प्रोतं प्रदूयेतैवं हास्य सर्वे पाप्मानः प्रादूयन्त इति ॥९१॥

इदं सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ।
रामः सत्यं परब्रह्म रामात्किञ्चिन्नविद्यते ।
तस्माद्रामस्यरूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत् ॥९२॥

श्रीरामजी का तारक मन्त्रराज श्रीराम महामन्त्र जाप्य है अत एव सत्य है, श्रीराम जी का नाम साधकों को मुक्ति एवं भुक्ति प्रदायक है इसलिए ये सत्य हैं, एवं यह श्रीरामजी का ध्यान मुक्ति का साधन है अतः सत्य है यानी श्रीरामस्तवराज में वर्णित सभी विषय सत्य हैं इसमें सन्देह नहीं क्योंकि इस श्रीरामस्तवराज में सर्वेश्वर श्रीरामजी हैं यानी सत्यस्वरूप एवं परब्रह्मस्वरूप प्रतिपादित हैं क्योंकि संसार में श्रीरामजी से अतिरिक्त कुछ भी नहीं है अतः श्रीरामजी का ही स्वरूप हाने से यह जगत् सर्वथा सत्य है मिथ्या या प्रतिबिम्ब नहीं । जगन्मिथ्या का खण्डन मेरे आनन्दभाष्य व्याख्यान प्रकाश तत्त्वत्रयसिद्धि तत्त्वदीप एवं वेदार्थचन्द्रिका प्रकाश-किरण तथा श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर प्रभा-किरण प्रभृति में देखें विस्तार भय से यहाँ नहीं लिख रहे हैं ॥९२॥

ननु श्रीरामः सगुणं ब्रह्म तस्य कार्यभूतं निखिलं जगदित्येतदुभयं यदि परमार्थिकसत्यं स्यात् तदिदं सर्वं फलं तद् रूपनिरूपणं घटेत न चैवमस्ति 'सत्यं ज्ञानमानन्तं ब्रह्म, एकमेवाद्वितीयं, मनसैवेदमाप्तव्यं नेह नानास्ति किञ्चन, निष्कलं निष्क्रियं शान्तं निरवद्यं निरञ्जनमित्यादिश्रुतिषु । चिन्मात्रद्वितीयस्य वस्तुनः परमार्थसत्यत्वप्रतिपादनादिति चेत्तत्राह इदं सत्यमिति सत्यमित्यस्य त्रिरुक्त्या निःसन्देहत्वं व्यज्यते । ननु प्रौढ्या किमिदमुच्यते तत्राह रामः सत्य मिति निखिलहेयप्रत्यनीकासंख्येयकल्याणगुणगणः श्यामसुन्दरः पंकजाक्षः श्रीराम एव सत्यं वस्तु यदसौ परब्रह्म सर्वस्मादुत्कृष्टं बृहद्गुणकं वस्तु तस्माद्

रामात् तत् विशेषणविशिष्टादन्यत् किञ्चिद् वस्तु नास्तीति विशिष्टाद्वैतवाद सिद्धान्तितः । अत्रैव सत्यमित्यादि संगच्छन्ते ।

ननु श्रीरामः सत्यं वस्त्वित्यस्मिन्नर्थेनैव विप्रतिपद्यामहे स्वरूपतो गुण तश्च स्वप्रकाशचिदानन्दत्वाङ्गीकारात् किन्तु जगन्मिथ्येति वयं ब्रूम इति चेत्तत्राह तस्मादि त्यर्द्धकेन यतः चिदचिद् वस्तुशरीरकः श्रीरामपरेशः सत्यस्तस्मादृशस्य तस्य रूपं शरीरमिदं जगत् सत्यं भवति रूपोऽयमिति पुंस्त्व मार्षः । वीप्सया निःसन्देहत्वम् ॥९२॥

卐 श्रीसूत उवाच 卐

श्रीरामचन्द्ररघुपुङ्गव ! राजवर्य
राजेन्द्र ? राम ? रघुनायक ? राघवेश ?
राजाधिराज ? रघुनन्दन ? रामभद्र ?
दासोऽहमद्यभवतः शरणागतोऽस्मि ॥९३॥

श्रीव्यासजी एवं श्रीयुधिष्ठिर के संवाद से श्रीरामतत्त्व का अवगम कर श्रीराम शरणागति को स्वीकार कर श्रीसूतजी ने कहा- चन्द्रमा के समान साधकों के सन्तापों को हरण करनेवाले हे श्रीरामचन्द्रजी ? हे रघुवंशियों में श्रेष्ठ श्रीरामजी ? हे राजाओं में श्रेष्ठ श्रीमान् हे राजेन्द्र ? हे श्रीरामजी ! हे रघुनायक ? हे राघवेश ? हे राजाओं के भी राजा श्रीरघुनन्दन ? हे श्रीरामभद्र शरणापन्न सभी को आनन्द प्रदाता श्रीरामजी ? आज से मैं आप का दास सेवक के रूपमें शरण में आया हूँ अतः करुणासिन्धु प्रभो मेरी रक्षा करें ॥९३॥

इत्थं श्रीव्यासयुधिष्ठिरसंवादेन स्तवराजं समाप्येदानीं श्रीसूतः प्रणमति श्रीरामेति बहुनानामकीर्त्तनेन तेषु नामसु प्रीतिनिर्भरस्तेन तत्रैकान्तित्वं व्यज्यते प्रागहं दासस्तत्त्वाभिमानीस्थितः । अथ वादरायणिसमधिगततत्वस्वरूपगुण स्वभावस्त्वय्यनुरज्यत्वाच्छरणागतोऽद्यारभ्यभवामित्याह-दासोऽहमिति तस्य लक्षणं चोक्तं-आनुकूल्यस्य संकल्पः प्रातिकूल्यस्य वर्जनम् । रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्ववरणं तथा । आत्मनिक्षेपकार्पण्ये षड्विधा शरणागतिः

इति ॥९३॥

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमेमहामण्डपे
मध्येपुष्पकमासने मणिमये वीरासने संस्थितम् ।
अग्रे वाचयतिप्रभञ्जनसुते तत्वंचसद्भिः परम्
व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे श्यामलम् ॥९४॥

श्रीसूतजी कहते हैं कल्पवृक्ष के नीचे सुवर्ण से निर्मित विशाल मण्डप के मध्यभाग में पद्मराग आदि मणियों से खचित पुष्पक नामस आसन पर वीर आसन से अच्छी प्रकार से विराजमान स्वाभिन्न स्वरूपा श्रीवैदेहीजी के नीलमणि के कान्ति के समान श्रीरामजी जिसके आगे वायुपुत्र श्रीहनुमानजी द्वारा सज्जनों के श्रीराम तत्त्वविषयक प्रश्न करने पर श्रीरामतत्त्व का निरूपण किया जा रहा है यानी सर्वकारण कारणत्वरूप से श्रीरामजी का ही उत्कृष्टरूप से प्रतिपादन किया जा रहा है एवं श्रीभरतादियों से प्रेरित होकर श्रीराम परतत्त्व का निरूपण हो रहा है ऐसे श्रीभरत श्रीलक्ष्मण प्रभृतियों से घिरे हुये श्यामल दिव्य स्वरूप श्रीरामजी को भजता हूँ यानी सर्वजीव शरण्य श्रीरामचन्द्रजी के शरण में हूँ ॥९४॥

अथ लङ्कां विजित्य अयोध्यामागतस्य श्रीरामस्यस्थितिविशेषं ध्यायन् प्रपत्तिं तस्य करोति वैदेहीति वैदेहीसहितं श्रीरामं भजे इत्यन्वयः । कीदृश मित्यपेक्षायामाह सुरद्रुमतले हैमे मण्डपस्तस्य मध्ये मणिमयं पुष्पकमासनं तत्र वीरासने संस्थितं तृतीयार्थे सप्तमी विवक्षावशात् कारकाणि भवन्तीत्युक्तेः । पुष्पकनामकं यया शोभया विशिष्टं यदासनं तस्मिन् पुनः कीदृशं भरतादिभिः परिवृतं श्यामलमिन्द्रनीलमणिप्रभम् कस्मिन् सतीत्यपेक्षायामाह प्रभञ्जनसुते हनुमति सद्भिः सहतत्त्वं वाचयति कीर्त्तयति सति तत्वं च श्रीरामस्वरूप गुणयाथात्म्यं सच्चिदानन्दस्वरूपोऽतिकारुणिकः सत्यसन्धः स्नेहासख्यै कनीरधिः परमरसिकः सर्वेश्वरो राजाधिराजो दाशरथिरित्यादिरूपं तच्च कीदृशं व्याख्यातं वेदादिभिः श्लाधितं तेषु प्रसिद्धं वा सद्भिरित्यत्र मुनिभिरिति क्वाचित्कः पाठः तत्र छन्दोभङ्गः त्वार्षत्वान्नदोषाय एतदुक्तं भवति ॥९४॥

रामं रत्नकिरीटकुण्डलयुतं केयूरहारान्वितम्
सीतालंकृतवामभागममलं सिंहासनस्थं विभुम् ।
सुग्रीवादिहरीश्वरैः सुरगणैः संसेव्यमानं सदा
विश्वामित्रपराशरादिमुनिभिः संसेव्यमानं प्रभुम् ॥९५॥

रत्नों से निर्मित मुकुट एवं कुण्डलों को धारण किये हुये एवं वाजूबन्द और हीरों से सुशोभित तथा श्रीसीताजी से अलंकृतवाम भागवाले और प्रकृति के मलों से रहित शुद्ध स्वरूप एवं दिव्यसिंहासन में विराजमान सर्वव्यापक तथा श्रीसुग्रीव अंगद प्रभृति वानर राजाओं एवं इन्द्रादि देवगणों से सर्वदा वार-वार प्रेम सहित सेवित तथा श्रीविश्वामित्र श्रीवशिष्ठ श्रीपराशर प्रभृति श्रेष्ठ मुनिजनों से संसेव्यमान यानी सदा स्तूयमान सर्वैश्वर्य सम्पन्न श्रीरामजी को भजता हूँ ॥९५॥

रावणं सपरिकरं निहत्य लङ्कां विभीषणाय प्रादाय वह्निना परीक्षितां श्रीजानकीं गृहीत्वा सपरिवारो रघुनाथः पुष्पकाख्यं विमानमारुह्य स्वराजधानीमयोध्यामाजगाम तत्र प्राकारमध्यवर्तीराजोपवेशनान्तर्दीप्यमानकल्पतरुतले सौवर्णमण्डपमध्ये तद्विमानं स्थापयामास नानामणिजटिते तस्मिन् विमाने वैदेहीमण्डितवामपार्श्वे भरतादिभिर्भ्रातृभिर्गृहीतछत्रचामरैः परिचर्य्यमाणो राजाधिराजः श्रीमान् दाशरथिः स्वजनेषु दयार्द्रदृग्वदनो विरराज तदानीं श्रीहनुमान् पवनात्मजः श्रीरामपरमैकान्तीसफलीभूतपरिश्रमतया सोल्लासश्रीनारदादिभिः सद्भिः सह श्रीरामस्वरूपवर्ण्य भक्तवात्सल्याख्यायिकां वीरुदमुज्जगौतत्रत्यां शोभामहं ध्यायामीति पुनरपि तादृशं श्रीरामं स्मृतिरानयामीत्यादि द्वाभ्यां भजे इति पूर्वेणैवान्वयः हरीश्वरैर्वानरराजैः सुरगणैरिन्द्रादिभिः स्फुटमन्यत् ॥९५॥

सकलगुणनिधानं योगिभिः स्तूयमानम्
भुजविजितविमानं राक्षसेन्द्रादिमानम् ।
महितवृषभयानं सीतया शोभमानं
स्मृतहृदयविमानं ब्रह्मरामाभिधानम् ॥९६॥

समस्त दया दाक्षिण्यादि गुणों के खजाने एवं श्रीसनत्कुमार तथा श्रीनारद प्रभृति योगियों से संप्रार्थित और हाथ के सहारे पुष्पक विमान को जीतनेवाले एवं रावण को नाश कर उन्नत सम्मान को प्राप्त करनेवाले और लोक संपूज्य सर्वोत्कृष्ट पुष्पक विमानवाले एवं मंगलकारक वृषभध्वज श्रीशंकरजी से पूजित तथा श्रीसीताजी से शोभित श्रीविग्रहवाले तथा मान रहित हृदयवाले साधकों द्वारा सदा स्मरण किये जा रहे जिनका नाम ब्रह्म इसप्रकार से संसार में व्याप्त है ऐसे सर्वेश्वर श्रीरामजी को मैं भजता हूँ ॥९६॥

सकलेति निखिलगुणाश्रयमित्यर्थः । भुजेति बाहुभ्यां विजितं विमानं पुष्पकं येन तं विजिताविमानाः साभिमाना बालिप्रभृतयो येन तमिति वा राक्षसेन्द्रो रावणस्तमत्ति नाशयति इति राक्षसेन्द्रादितादृशो मानश्चित्तसमुन्न तिर्यस्य तं चित्तसमुन्नतिवीर्यस्थायी उत्साहः महितं सर्वैः पूजितं ऋषभं श्रेष्ठं यानं प्रयाणं पुष्पकं वा यस्य तं गजराजगतिं संश्लाध्यपुष्पकं वेत्यर्थः । सीतया शोभमानं तडितावारिधरमिवं तयातिमञ्जुलमित्यर्थः । हृदयं विमानं निर्गर्वं येषां ते हृदयविमानाः प्रपन्ना भक्तास्ते स्मृता येन तं ध्यातृप्रपन्नमिति यावत् । यदुक्तं-दर्शनध्यानसंस्पर्शैर्मत्स्यकूर्मविहंगमाः । स्वान्यपत्यानि पुष्णाति तथाहमपि पद्मजेति ईदृशं रामाभिधानं ब्रह्म भजे ॥९६॥

रघुवर ? तव मूर्ति र्मामके मानसाब्जे
नरकगतिहरन्ते नामधेयं मुखे मे ।
अनिशमतुलभक्त्या मस्तकं त्वत्पदाब्जे
भवजलनिधिमग्नं रक्ष मामार्तबन्धो ॥९७॥

हे रघुवर ? मेरे हृदयरूप कमल में सर्वदा आपकी सर्वजन मोहक दिव्य मूर्ति विराजमान हो एवं सर्वप्रकार के नरकों के ताप नाशक आपका श्रीरामनाम मेरे मुख में अतुलभक्ति के साथ सर्वदा रहे यानी सदा श्रीरामनाम को ही जपा करुं और आपके श्रीचरणकमल में भी मेरा अतिअनुराग सदा बनी रहे हे आर्तबन्धो ? दुःखियों के दुःखों को दूर करनेवाले दीनबन्धु श्रीरामजी ? संसाररूप समुद्र में निमग्न यानी जन्म मृत्युरूपी समुद्र में डूबे हुये मेरी रक्षा

करें ॥९७॥

इदानीं तन्मूर्तिं तन्नामस्फूर्तिमाशास्ते रघुवरेति हे रघुवर श्रीरामचन्द्र ! मामके मदीये मानसाब्जे हृत् पुण्डरीके तव मूर्तिरनिशं स्फुरतु त्वत्पदाब्दे मामके मस्तकं स्फुरतां ते तव नामधेयं मे मुखे स्फुरतु कीदृशं तत् नरकगतिहरं मुक्तिदं हे आर्तवन्धो महाकारुणिक ! भवजलनिधिमग्नं मां रक्षेति कारुण्यमुत्पादयितुं दैन्यव्यक्तिः ॥९७॥

रामरत्नमहं वन्दे चित्रकूटपतिं हरिम् ।
कौशल्याशुक्तिसम्भूतं जानकीकण्ठभूषणम् ॥९८॥

इति श्रीसनत्कुमारसंहितायां नारदोक्तं श्रीरामचन्द्रस्तवराजस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

चित्रकूट के अधीश्वर साधकों के सभी दुःखों का हरण करनेवाले कौशल्यारूप शुक्ति से आविर्भूत एवं श्रीजानकीजी के कण्ठ के आभूषण श्रीरामरूप रत्न को मैं सादर प्रणाम करता हूँ ॥९८॥

आनन्दभाष्यसिंहासनासीन
जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी
प्रणीत 卐 प्रकाश
वसन्तपञ्चमी २०४६ श्रीरामानन्दाब्द ६९०

卐 श्रीरामः शरणं मम 卐

अथ तद्विचित्रलीलालासौरसिकमौलित्वेन प्रणमति रामेति रामो रत्नमौक्तिकमिव तमहं वन्दे कौशल्याशुक्तिरिव ततः सम्भवो व्यक्तिर्यस्य तं तस्य भोक्त्रीमाह जानकीति भोगस्थानमाह चित्रकूटेति हरिं भजे मनोहरम् ॥९८॥

श्रीमद्बोधायनसिद्धान्तवेदी हर्यानन्दाचार्यो भावगर्भं यदेतत् भाष्यं एष स्तवराजे व्यतानीद्रामप्रेष्ठाः सादरं तत्पठन्तु श्रीरामस्तवराजः किमयं भाष्येण भूषितो भक्तान् कल्पद्रुम इव मधुपात्रिचितः कुसुमादिना न मादयति ? ।

विमलकमलनेत्रं व्योमवन्नीलगात्रं तपनकुलपवित्रं वेदमार्गप्रकाशम् ।
प्रणतजनशरण्यं स्वीयमायाऽवतारं त्रिगुणपरिवृतं तं नौमिरामाभिरामम् ॥

卐 श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु 卐

卐 ॥ 卐

❋ सर्वेश्वर श्रीसीतारामाभ्यां नमः ❋

श्रीहनुमते नमः

卐 श्रीरामरक्षास्तोत्रम् 卐

आनन्दभाष्यसिंहासनासीन

जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामेश्वरानन्दाचार्य

प्रणीत बालबोधिनी सहितम्

यह श्रीरामरक्षास्तोत्र सर्वकामनाओं को प्रदान करनेवाला चमत्कारी स्तोत्र है इसका सभी साधकवर्ग अपनी-२ अभीष्ट सिद्धि के लिये सिद्धि का अनुष्ठान करते हैं। उसका अति संक्षिप्त विधान यह है कि आश्विन अथवा चैत्र मास की नवरात्रि में नौ दिनों तक प्रतिदिन ग्यारह आवृत्ति पाठ करने से सिद्ध हो जाता है। सिद्धि करने की इच्छावाले को प्रातः नहा धोकर पवित्र वस्त्र पहनकर गरम आसन में पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुँहकर बैठ जाना चाहिये। अपने आसन से ऊँचे आसन में श्रीरामजी, श्रीसीताजी, श्रीलक्ष्मणजी तथा श्रीहनुमानजी की संयुक्त श्रीविग्रह को सामने पधराकर चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजा करके एकाग्र मनसे ध्यान करके पाठ करना चाहिये। पाठ करें तब तक दीप एवं अगरबत्ती चालू रखना एवं किसी से बोलना नहीं पाठ शुद्ध तथा स्पष्ट होना चाहिये। विश्वास एवं निष्ठा के अनुसार ऊचित फल मिल जाता है।

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य बुधकौशिकऋषिः श्रीसीतारामचन्द्रो देवता अनुष्टुप् छन्दः श्रीसीताशक्तिः श्रीमान् हनुमान् कीलकं श्रीरामचन्द्रप्रीत्यर्थे श्रीरामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः।

इस श्रीरामरक्षास्तोत्र के बुधकौशिकजी ऋषि हैं, श्रीसीताजी एवं श्रीरामचन्द्रजी देवता हैं, तथा अनुष्टुप् छन्द है। श्रीसीताजी शक्ति हैं श्रीहनुमानजी कीलक हैं। श्रीरामचन्द्रजी की प्रसन्नता के लिये इस श्रीरामरक्षास्तोत्र का जप या पाठ में विनियोग करने में आता है।

❋ ध्यानम् ❋

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं
पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम्।
वामाङ्कारूढसीतामुखकमलमिलल्लोचनं नीरदाभं
नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम्॥

जिसके हाथों में दिव्य धनुष्र एवं बाण धारण किये हुये हैं तथा पद्मासन बाँध करके विराजमान हैं एवं पीताम्बर को धारण किये हुये हैं। जिनके अतिप्रसन्न नयन नवीन कमलदल के साथ प्रतियोगिता करते हैं एवं जिनके वामभाग में विराज मान श्रीसीताजी के मुखकमल के साथ सम्मिलित से लगते हैं ऐसे घुटनों तक लम्बे हाथवाले मेघ के समान श्यामवर्ण एवं नाना प्रकार के अलङ्कारों से विभूषित तथा विशाल जटासमूह को धारण करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करना चाहिये।

卐 स्तोत्रम् 卐

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥१॥
ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् । जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् ॥२॥
सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तं चरान्तकम् । स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ॥३॥

श्रीरघुनाथजी का दिव्य चरित सौ करोड़ विस्तारवाला है उसका एक-एक अक्षर मानवों के महान पाप समुहों को नाश करनेवाले हैं।

जो, श्रीरामचन्द्रजी नीलकमल के समान श्यामवर्णवाले हैं और कमल के समान नयनवाले हैं तथा जटाओं के मुकुट से सुशोभित हैं एवं हाथों में खड्ग, तुणीर, धनुष तथा बाण धारण किये हुये हैं। दुष्ट राक्षसों के संहार एवं संसार के रक्षा के हेतु अपनी लीला मात्र से इस भूतल पर अवतीर्ण हुये हैं। सर्वव्यापक, अजन्मा, सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी का श्रीसीताजी के साथ प्रेमपूर्वक स्मरण करके प्राज्ञ जनों को सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करनेवाला इस श्रीरामरक्षास्तोत्र का पाठ करना चाहिये ॥१-३॥

रामरक्षांपठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् ।
शिरोमे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ॥४॥

श्रीरघुकुल भूषण श्रीराघवजी मेरे सिर की रक्षा करें। एवं श्रीदशरथजी के आत्मज (पुत्र) श्रीरामजी मेरे भाल प्रदेश (ललाट) की रक्षा करें ॥४॥

कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती ।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥५॥

श्रीकौसल्यानन्दन श्रीरामजी मेरी आँखों की रक्षा करें। तथा विश्वामित्र के प्रिय श्रीराम जी कानों की रक्षा करें। और यज्ञ के रक्षक श्रीरामजी मेरे घ्राण (नाक) की रक्षा करें। तथा श्रीसौमित्र वत्सल श्रीरामजी मेरे मुख की रक्षा करें ॥५॥

जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः ।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥६॥

मेरी जिह्वा की रक्षा विद्या के खजाने श्रीरामजी करें। एवं श्रीभरतजी से वन्दित श्रीरामजी मेरे कण्ठ की रक्षा करें। दिव्य आयुध वाले श्रीरामजी मेरे स्कन्धों की रक्षा करें।

और श्रीशंकरजी के धनुष को तोडनेवाले श्रीरामजी मेरे भुजाओं की रक्षा करें ॥६॥

करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित् ।
मध्यं पातु खरध्वंसीनाभिं जाम्बवदाश्रयः ॥७॥

श्रीसीताजी के पति श्रीरामजी मेरे हाथों की रक्षा करें, परशुराम को जीतने वाले श्रीराम जी मेरे हृदय की रक्षा करें। एवं खरदूषण आदि को मारनेवाले श्रीरामजी मेरे मध्यभाग की रक्षा करें। श्रीजाम्बवानजी के आश्रयस्वरूप श्रीरामजी मेरी नाभी की रक्षा करें ॥७॥

सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः ।
ऊरूरघूत्तमः पातु रक्षः कुलविनाशकृत् ॥८॥

श्रीसुग्रीवजी के स्वामी श्रीरामजी मेरे कमर की रक्षा करें। श्रीहनुमानजी के प्रभु श्रीरामजी मेरी हड्डियों की रक्षा करें। और राक्षस कुल के नाशक श्रीरामजी मेरे उरुओं की सदा रक्षा करें ॥८॥

जानुनी सेतुकृत्पातु जङ्घेदशमुखान्तकः ।
पादौविभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥

समुद्र में सेतु बाँधनेवाले श्रीरामजी जानुओं की रक्षा करें। तथा रावण को मारने वाले श्रीरामजी जङ्घों की रक्षा करें। और श्रीविभीषणजी को श्री, राज्य, ऐश्वर्यों को देनेवाले श्रीरामजी मेरे पैरों की रक्षा करें। तथा सर्वेश्वर श्रीरामजी मेरे सम्पूर्ण शरीर की रक्षा करें ॥९॥

एतां रामबलोपेतं रक्षां यः सुकृती पठेत् ।
स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥१०॥

जो पुण्यवान् पुरुष श्रीरामजी के बल से सम्पन्न श्रीरामरक्षास्तोत्र का पाठ करेंगे वे दीर्घायु, सुखी-पुत्रवाले, विजयवान् एवं विनय से सम्पन्न होंगे ॥१०॥

पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः ।
न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥११॥

जो नीच प्रवृत्तिवाला जीव पाताल, पृथ्वी, या आकाश में विचरण किया करता है तथा जो छद्मवेष (वेष बदलकर) में घूमा करते हैं वे सब इस श्रीरामनाम से सुरक्षित जीव को कोई भी देख नहीं सकते हैं ॥११॥

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् ।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥१२॥

हे राम !-हे रामभद्र ! हे रामचन्द्र या हे रघुनाथ ! आदि श्रीरामनामों के स्मरण करने से मानव पापों से लिप्त नहीं होता है। और परिणामतः ऐहिक भोग तथा पार मार्थिक सायुज्य मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है ॥१२॥

जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम् ।

य: कण्ठेधारयेत्तस्य करस्था: सर्वसिद्धय: ॥१३॥

जो मानव जगत विजयी, सर्वप्रधान, एकमात्र इस श्रीरामनाम मन्त्र से सुरक्षित इस श्रीरामरक्षास्तोत्र को कण्ठ में धारण करता है। अर्थात् कण्ठस्थ करके सदा पाठ करता है उसे सम्पूर्ण सिद्धियां हस्तगत हो जाती हैं ॥१३॥

वज्रपञ्जरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् ।
अव्याहताज्ञ: सर्वत्र लभते जयमङ्गलम् ॥१४॥

जो मनुष्य इस वज्र पञ्जर नामवाला श्रीरामकवच का स्मरण करता है उसकी आज्ञा का किसी भी जगह में उल्लङ्घन नहीं होता है। एवं उसे सर्वत्र जय तथा मङ्गल की प्राप्ति होती है ॥१४॥

आदिष्टवान् यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हर: ।
तथा लिखितवान् प्रात: प्रबुद्धो बुधकौशिक: ॥१५॥

रात्रिं में स्वप्नावस्था में श्रीशंकरजी ने जिस प्रकार इस श्रीरामरक्षास्तोत्र का आदेश (उपदेश) दिये उसीप्रकार श्रीबुधकौशिक ऋषिजी ने प्रात: जगने के बाद लोककल्याण हेतु लिखे हैं ॥१५॥

आराम: कल्पवृक्षाणां विराम: सकलापदाम् ।
अभिरामस्त्रिलोकानां राम: श्रीमान् स न: प्रभु: ॥१६॥

जो सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी कल्पवृक्षों के बगीचे के समान हैं एवं समस्त आपत्तियों के नाश करनेवाले हैं, तथा तीनों लोक में परमसुन्दर हैं यानी जिनके समान सुन्दर दूसरा कोई नहीं है ऐसे, सर्व ऐश्वर्यशाली श्रीरामजी हमारे प्रभु अर्थात् सर्व समर्थ रक्षक हैं ॥१६॥

तरुणौरूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ ।
पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥१७॥
फलमूलाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ ।
पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥१८॥
शरण्यौ सर्वसत्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् ।
रक्ष: कुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥१९॥

जो तरुण अवस्थावाले हैं, रूपवान् और सुकुमार हैं, तथा महाबलशाली एवं कमल के समान विशाल नेत्रवाले हैं। चिरवस्त्र यानी वृक्ष के छाल के वस्त्रों को पहने हुये हैं तथा कृष्ण मृग के चर्म को धारण करनेवाले तथा-कन्द-मूल-फल के आहार करनेवाले, संयमशील, तपस्वी, ब्रह्मचारी हैं और सम्पूर्ण जीवों को अपने शरण में रखनेवाले हैं तथा समस्त धनुष धारियों में अतिश्रेष्ठ एवं राक्षस कुलों के नाश करनेवाले हैं। ऐसे रघुकुल श्रेष्ठ दशरथ राजकुमार सर्वेश्वर श्रीरामजी तथा श्री लक्ष्मणजी हमारी सदा रक्षा करें ॥१७-१९॥

आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ ।

रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥२०॥

जो श्रीरामजी एवं श्रीलक्ष्मणजी ने सन्धान किया हुआ धनुष हाथ में लिये हैं और वे दोनों बाणों को स्पर्श किये हुये हैं तथा अक्षय बाणों से युक्त तरकश को धारण किये हुये हैं। ऐसे श्रीरामजी तथा श्रीलक्ष्मणजी मेरी रक्षा करने के लिये मार्ग में सदा हमारे आगे-आगे चला करें ॥२०॥

संनद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा ।
गच्छन्मनोरथान्नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः ॥२१॥

सर्वदा उद्यत अर्थात् सर्वदा तैयार रहनेवाले कवच पहने हुये हाथ में खड्ग एवं धनुष बाण धारण किये हुये। युवा अवस्थावाले सर्वेश्वर श्रीरामजी श्रीलक्ष्मण जी के साथ हमारे आगे-२ चलकर सभी मनोरथों की रक्षा करें ॥२१॥

रामो दाशरथिः शूरोलक्ष्मणानुचरो बली। काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ॥२२॥
वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः । जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥२३॥

इत्येतानि जपन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः ।
अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः ॥२४॥

साधना करनेवाले जीवात्माओं को लक्ष्य में रखकर भगवान् कहते हैं कि जो मानव श्रीराम, दाशरथि, सूर, लक्ष्मणानुचर, बली, काकुत्स्थ, पुरुष, पूर्ण, कौशल्येय रघूत्तम, वेदान्तवेद्य, यज्ञेश, पुराणपुरुषोत्तम, जानकीवल्लभ, श्रीमान् तथा अप्रमेय, पराक्रमवाले इन नामों का नित्य प्रति श्रद्धापूर्वक जप करनेवाला मेरा भक्त अश्वमेघ यज्ञ करने से जो फल नहीं मिलता है उससे भी अधिक फलप्राप्त करेगा। इस विषय में कोई शंका का स्थान नहीं है ॥२२-२४॥

रामं दूर्बादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् ।
स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः ॥२५॥

जो साधना करनेवाला, दूर्वादल के समान श्यामवर्णवाले और कमल के समान आँखवाले तथा पीताम्बर धारण किये हुये सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी के इन दिव्य नामों से स्तवन करेगा वह इस संसार चक्र में कभी भी नहीं पडेगा ॥२५॥

रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं,
काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् ।
राजेन्द्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिं,
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥२६॥

श्रीलक्ष्मणजी के बडे भाई, रघुकुल के अतिश्रेष्ठ तथा श्रीसीताजी के स्वामी एवं अति सुन्दर ककुत्स्थ कुलनन्दन एवं करुणा के सागर और गुणों के खजाने ब्राह्मणों के भक्त तथा परमधार्मिक राजराजेश्वर और सत्यनिष्ठ तथा राजा दशरथ के पुत्र, श्यामवर्णवाले एवं शान्तमूर्ति सम्पूर्णलोक में अति सुन्दर तथा रघुकुल के तिलक, रावण के शत्रु, राघव, सर्वेश्वर श्रीराम

चन्द्रजी को मैं वन्दना करता हूँ ॥२६॥

रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय बेधसे । रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥२७॥

विश्व के विधात्रिस्वरूप श्रीरामजी श्रीरामभद्रजी श्रीरामचन्द्रजी तथा श्रीरघुनाथजी एवं सर्वसमर्थ श्रीसीतापति भगवान् श्रीरामचन्द्रजी को मेरा सादर दण्डवत प्रणाम स्वीकार हो ॥२७॥

श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम, श्रीराम राम भरताग्रज राम राम ।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम, श्रीराम राम शरणं भव राम राम ॥२८॥

हे रघुकुल शिरोमणे श्रीरघुनन्दन श्रीरामजी ! हे भरताग्रज श्रीरामजी ! हे सर्व समर्थ रणधीर श्रीरामजी ! आप मेरे आश्रय बने अर्थात् मैं आपके शरण में आया हूँ । आप मेरी रक्षा करें ॥२८॥

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि, श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि ।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि, श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥२९॥

मैं श्रीरामचन्द्रजी के श्रीचरणकमलों का मन से स्मरण करता हूँ तथा श्रीराम चन्द्रजी के श्रीचरणों का वाणी से ग्रहण यानी कीर्तन करता हूँ । और सर्वेश श्रीराम चन्द्रजी के श्रीचरणकमलों में शिर नवाकर नमन यानी सादर दण्डवत प्रणाम करता हूँ, और श्रीरामचन्द्रजी के श्रीचरणकमल की ही शरण स्वीकार करता हूँ ॥२९॥

माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः ।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥३०॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी मेरी माता हैं, तथा श्रीरामचन्द्रजी मेरे पिता हैं और सर्व समर्थ श्रीरामचन्द्रजी ही मेरे स्वामी एवं सखा हैं । तथैव दया के सागर श्रीरामचन्द्र जी ही मेरे सर्वस्व हैं । सर्वेश श्रीरामचन्द्रजी के सिवाय दूसरे किसी को भी मैं बिल्कुल नहीं जानता हूँ ॥३०॥

दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा । पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम् ॥३१॥

जिन श्रीरामचन्द्रजी के दक्षिण भाग में श्रीलक्ष्मणजी तथा वामभाग में सर्वेश्वरी श्रीजानकीजी और आगे के भाग में श्रीहनुमानजी विराजमान हैं उन सर्वेश्वर श्रीरघु नाथजी को मैं सदा दण्डवत् प्रणाम करता हूँ ॥३१॥

लोकाभिरामं रणरङ्गधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ॥३२॥

जो सम्पूर्ण संसार में अत्यन्त सुन्दर हैं तथा रणक्रीडा में धीर हैं और कमल के जैसे नेत्रवाले हैं तथा रघुवंश के नायक और करुणामूर्ति तथा करुणा के भण्डार हैं ऐसे श्रीरामचन्द्रजी की मैं शरणागति स्वीकार करता हूँ ॥३२॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥३३॥

जिनकी मन के समान गति एवं वायु के समान वेग है तथा जो परम जितेन्द्रिय और बुद्धिमानों में अतिश्रेष्ठ हैं ऐसे पवननन्दन वानरयूथों के मुख्य श्रीराम चन्द्रजी के विश्वस्त दूत श्रीहनुमानजी की मैं शरणागति स्वीकार करता हूँ ॥३३॥

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥३४॥

श्रीरामचरित्ररूपी कवितामयी डाल में बैठकर अतिसुन्दर अक्षरवाले 'राम' 'राम' ऐसे मधुर नामों का कूजन करनेवाले वाल्मीकिरूप कोयल की मैं वन्दना करता हूँ ॥३४॥

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥३५॥

सभी आपत्तियों का हरण करनेवाले एवं सर्वप्रकार के सम्पत्तियों को प्रदान करनेवाले लोकाभिराम यानी सर्वलोक सुन्दर सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी को मैं बार-बार नमस्कार यानी सादर दण्डवत् प्रणाम करता हूँ ॥३५॥

भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम् । तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम् ॥३६॥

'राम' 'राम' 'राम' इसप्रकार सर्वदा किये गये श्रीराम शब्द का घोष सभी संसार बीजों को जला देनेवाला यानी नाश करनेवाला है तथा समस्त सुख एवं सम्पत्ति को देनेवाला और यमदूतों को भयभीत कर भगा देनेवाला है ॥३६॥

रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे, रामेणाभिहतानिशाचरचू रामाय तस्मै नमः ।
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं,
रामे चित्तलयः सदाभवतु मे भो राम ? मामुद्धर ॥३७॥

सभी राजाओं में श्रेष्ठ श्रीरामजी सदा विजयी बनते हैं, श्रीरामजी यानी श्रीसीता जी के पति श्रीरामचन्द्रजी का मैं सदा भजन करता हूँ। जिन श्रीरामचन्द्रजी ने सम्पूर्ण निशाचर सेनाओं का नाश कर दिये थे उन श्रीरामचन्द्रजी को मैं प्रणाम करता हूँ यानी सादर दण्डवत् प्रणाम करता हूँ क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी से बड़ा दूसरा कोई आश्रय नहीं है। इससे मैं सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी का दास हूँ। यानी अनन्य सेवक हूँ। मेरा चित्तं सदा श्रीरामचन्द्रजी में ही विलीन रहे। हे सर्वाधार श्रीरामजी ! आप इस संसार से मेरा उद्धार करें ॥३७॥

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे । सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥३८॥

श्रीमहादेवजी श्रीपार्वतीजी से कहते हैं-'हे सुमुखी ! 'राम' यह श्रीरामनाम श्रीविष्णु के हजार नाम के समान है अतः मैं सर्वदा 'राम' 'राम' 'राम' इसप्रकार जप करते हुये मनोरम श्रीरामजी के नाम में ही रमण किया करता हूँ ॥३८॥

आनन्दभाष्यसिंहासनासीन

जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामेश्वरानन्दाचार्य

प्रणीता ❦ **बालबोधिनी** ❦ समाप्ता

सर्वेश्वरश्रीसीतारामाभ्यां नमः

आचार्यसार्वभौम श्रीपूर्णानन्दाचार्यप्रणीतम्

श्रीरामपञ्चकम्

पूर्णो दिव्यतनुः परो रघुपतिर्लोकेऽजडेऽप्राकृते
पूर्णोदाशरथिर्विकाररहितो लीलाविभूतावपि ।
यो वेदैकनिरूपितश्च सदसद्रूपः परब्रह्म सः
श्रीरामो जगदाश्रयो भवतु मे त्राता जगद्व्यापकः ।।१।।

सद्बीजं जगतो.जगत् त्रयगुरुः कर्त्ता तथा रक्षकः
संहर्त्ता जगतीतनुर्हि जगतश्चात्मा विभुः सर्ववित् ।
निर्दोषो जगदीश्वरो गुणनिधिर्नित्योऽजडः सौख्यदः
श्रीरामो जगदाश्रयो भवतु मे त्राता जगद्व्यापकः ।।२।।

सृष्टिः सज्जगतश्चराचरपतेर्यस्येक्षणाद् विश्रुता
भेदाभेदपरस्तथा श्रुतिगणो यत्रान्वितश्चास्ति सः ।
आनन्दैकनिधिः सुबद्धजलधिर्भिन्नश्चितश्चाचितः
श्रीरामो जगदाश्रयो भवतु मे त्राता जगद्व्यापकः ।।३।।

कारुण्याम्बुनिधिश्च यस्तनुभृतां प्राप्यस्तथा प्रापकः
सायुज्यं च ददाति योहि निजया भक्त्या प्रपत्त्याऽथवा ।
सर्वेशः स परात्परश्च रहितो वैषम्यनैर्घृण्यतः
श्रीरामो जगदाश्रयो भवतु मे त्राता जगद्व्यापकः ।।४।।

जायन्ते मृतिमाप्नुवन्ति च पुनर्लब्ध्वा न यं प्राणिनो
यञ्चोपेत्य भवेन्न वै तनुमतां लोके पुनर्जन्म सः ।
ब्रह्मेशानसुरेन्द्रवन्दितपदो भक्त्येकलभ्यः प्रभुः
श्रीरामो जगदाश्रयो भवतु मे त्राता जगद्व्यापकः ।।५।।

चिदानन्दार्यशिष्येण पूर्णानन्देन निर्मितम् ।
श्रीरामपञ्चकं भूयात् सर्वश्रेयः प्रदायकम् ।।

जगद्गुरुश्रीरामरावलाचार्यविरचित

श्रीरामषडक्षरस्तवः

आनन्दभाष्यकृद्रामानन्दं ब्रह्म च राघवम् ।
नत्वा गुरुं च कुर्वे श्रीरामषडक्षरस्तवम् ॥

वेदैकवेद्याय परात्पराय जगच्छरीराय महात्मने च ।
निर्दोषरूपाय गुणाकराय नमोस्तु रेफाय च राघवाय ॥१॥

भक्त्यैकलभ्याय च भक्तिदाय भक्तप्रियायाथ च मुक्तिदाय ।
भक्तस्य वश्याय परेश्वराय नमः सुरेफाय च राघवाय ॥२॥

दयानिधानाय च दीनलोकसुबन्धवे दैन्यहरात्मने च ।
श्रितैकरक्षाक्रतुदीक्षिताय नमो मकराय च राघवाय ॥३॥

समस्तलोकस्य च कारकाय समस्तलोकस्य च हारकाय ।
समस्तलोकस्य च पालकाय नमो यकाराय च राघवाय ॥४॥

अमोघपूजास्तवदर्शनाय सुदिव्यदेहाय मनोहराय ।
विशिष्टरूपाय चिताऽचिता च नमो नकाराय च राघवाय ॥५॥

महेषुशार्ङ्गैकधनुर्धराय महाशरण्याय महाश्रयाय ।
स्वयम्प्रकाशाय तमः पराय नमो मकाराय च राघवाय ॥६॥

श्रीरामरावलाचार्यद्वारपीठेशनिर्मितः ।
स्तवोऽयं भवतान्नित्यं लोककल्याणकारकः ॥